मई 2019

आई.एस.ओ. 9001: 2008 संगठन
मूल्य: ₹30

खेती

• इस अंक में •

सजावटी मछलियों के पालन में आहार प्रबंधन

स्पायरुलिना के गुण एवं उत्पादन

बारानी कृषि में हाइड्रोजैल का उपयोग

जायके से भरपूर हैं छत्तीसगढ़ी व्यंजन

खिलेश कुमार सिन्हा, रेवा कुलश्रेष्ठ, सौमित्र तिवारी और **योगेश कुमार**
खाद्य प्रसंस्करण एवं प्रौद्योगिकी विभाग, बिलासपुर विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

खुरमी तैयार करने की प्रक्रिया

तैयार खुरमी

"देश के अलग-अलग क्षेत्रों में तरह-तरह के व्यंजन बनाए जाते हैं। छत्तीसगढ़ी व्यंजन भी अपनी एक विशेष पहचान रखते हैं। यहां पर पर्वों, उत्सवों एवं त्यौहारों में विभिन्न प्रकार के पकवान बनाए जाते हैं। महिलाएं इस काम को विशेष रूप से करती हैं। जो महिलाएं इस काम में दक्ष होती हैं, घर एवं समाज में सम्मान की पात्र होती हैं। छत्तीसगढ़ के लोग पकवान बनाकर अपने पड़ोसियों को ये प्रसाद के रूप में वितरित करते हैं। यह लोक संस्कृति की महत्ता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।"

ठेठरी

त्यौहारों के समय जो पकवान बनाये जाते हैं, उनका छत्तीसगढ़ में एक अलग महत्व है। इसमें से एक ठेठरी है। छत्तीसगढ़ सौहार्द्र से भरा राज्य है। यहां रिश्तों में मिठास तो व्याप्त है ही, परंतु यहां के व्यंजन मिठास के साथ एक अलग स्वाद से भरे होते हैं। यह व्यंजन लंबे समय तक खाने योग्य बना रहता है। इसका तीज में विशेष स्थान है, जिसमें सुहागिनें अपने पति की लंबी उम्र के लिए व्रत रखती हैं। छत्तीसगढ़ में दलहन उत्पादन में चना प्रथम है, जिसके कारण यह आसानी से सभी घरों में बनाया जा सकता है।

ठेठरी को कढ़ाही में तलते हुए

तैयार ठेठरी

इस व्यंजन में प्रोटीन की अधिक मात्रा होती है। ठेठरी के लिए चाहिए बेसन, थोड़ा सा जीरा तथा स्वादानुसार नमक। सबसे पहले बेसन में नमक व जीरा मिलाकर गूंथ लिया जाता है। अब छोटे-छोटे रस्सीनुमा बनाकर या आयताकार घुमाकर इन्हें आकार दिया जाता है। इसके बाद कढ़ाही में तेल गर्म करके उसमें लाल होने तक तलते हैं।

खुरमी को आकार देते हुए

खुरमी

यह गेहूं तथा चावल के आटे के मिश्रण से निर्मित लोकप्रिय मीठा व्यंजन है। यह तीजा, पोला के समय बनाया जाता है।

देहरौरी (बोबरा)

देसी रसगुल्ला एक मीठा व्यंजन है। यह चावल के आटे व गुड़ के मिश्रण से बनाया जाता है।

गुलगुला

गेहूं का आटा व गुड़ से निर्मित यह मीठा व्यंजन भजिये का एक रूप है। अतिथि सत्कार हेतु विशेष रूप से इसे बनाया जाता है।

पपची

गेहूं-चावल के आटे से निर्मित यह एक अनुष्ठानिक व्यंजन है। यह बालूशाही के समान होता है। विवाहोत्सव में इसका विशेष महत्व होता है।

तहमई

यह दूध, चावल व शक्कर से निर्मित मीठा व्यंजन है। इसे खीर का ही एक रूप कहते हैं। शरद पूर्णिमा के अवसर पर इसका विशेष महत्व होता है।

अंगाकर रोटी

यह चावल व गेहूं के आटे से निर्मित स्वादिष्ट व्यंजन है। इसे केले या परसा

आवरण पृष्ठ III पर जारी

भाकृअनुप
ICAR

खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान की मासिक पत्रिका

वर्ष: 72, अंक: 1, मई 2019

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग
   नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
   पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी
अशोक शास्त्री

लेआउट डिज़ाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष : 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति : रु. 30.00 वार्षिक : रु. 300.00

E-mail: khetidipa@gmail.com

विषय-सूची

संपादकीय — कृषक उत्पादक संगठनों का महत्व, **अशोक सिंह**

आवरण कथा — 3
***स्यायरूलिना* के गुण एवं उत्पादन**
सुधीर सक्सेना और डॉली वातलधर

पशुपालन — 6
कैसे करें उन्नत बकरी पालन
चेतना गंगवार, सुरेश दिनोंकर खर्चे, श्रीप्रकाश सिंह और अनुज कुमार सिंह सिकरवार

जल प्रबंधन — 8
बारानी कृषि में हाइड्रोजैल का उपयोग
सुरेश कुमार, तृशा राय, लेख चंद, बांके बिहारी, मदन सिंह, एस.एस. श्रीमाली, एम. मुरूगानंदम, यू.के. मौर्या, दर्शन एम. कदम, राकेश कुमार, एस.के. शर्मा और अनिल मलिक

नई किस्म — 11
चने की उन्नत किस्म 'सीएसजे-51'
वेद प्रकाश यादव, एस.जे. सिंह, जी.पी. दीक्षित, एन.पी. सिंह और वी.एस. यादव

खाद्य तेल — 14
तेल-ताड़ उत्पादन बढ़ाने की जरूरत
आर.के. माथुर, के. मनोरमा, के. सुरेश और जी. रविचन्द्रन

व्यावसायिक खेती — 19
अनुपजाऊ बारानी क्षेत्रों के लिए लाभकारी है मेहंदी
मोती लाल मीणा, ऐश्वर्य डूडी और धीरज सिंह

पशु स्वास्थ्य — 23
दुधारू पशुओं की प्रजनन समस्याओं का प्रबंधन
दीक्षा पटेल और के. पोंनुसामी

आहार — 26
सोयाबीन है पोषण सुरक्षा का महत्वपूर्ण स्रोत
सत्यप्रिय, प्रेमलता सिंह, चेतना नागर, रवि शंकर और सत्य प्रकाश

आधी दुनिया — 30
महिला किसानों के लिए उपयोगी यंत्र
स्वीटी कुमारी, रमेश कुमार साहनी और आर. आर. पोतदार

मत्स्य — 34
सजावटी मछलियों के पालन में आहार प्रबंधन
मनोज कुमार, कृष्णा कुमार चौधरी और बी.आर. होन्नानंदा

सफलता गाथा — 39
खेत तालाब से आई जीवन में हरियाली
दीपक हरि रानडे, इन्दु स्वरूप, ओम प्रकाश गिरोठिया, दुष्यंत भगत और आशीष उपाध्याय

मुनाफा — 42
सोयाबीन की बिक्री में ध्यान रखने योग्य बिन्दु
पुरुषोत्तम शर्मा

सुरक्षा — 45
भूमिगत कीटों से ऐसे बचाएं फसल
सुनील कुमार, भगवत सिंह राठौड़, बजरंग लाल ओला और पी.के. राय

कृषि कैलेण्डर — 47
मई के मुख्य कृषि कार्य
राजीव कुमार सिंह, विनोद कुमार सिंह, कपिला शेखावत, प्रवीण कुमार उपाध्याय और एस.एस. राठौर

स्वाद
जायके से भरपूर हैं छत्तीसगढ़ी व्यंजन — आवरण II
खिलेश कुमार सिन्हा, रेवा कुलश्रेष्ठ, सौमित्र तिवारी और योगेश कुमार — आवरण III

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं, उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुनः प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। लेखों में संस्तुत रसायनों के डोज का प्रयोग करने से पहले विशेषज्ञों से सलाह अवश्य लें।

संपादकीय

कृषक उत्पादक संगठनों का महत्व

इस वास्तविकता से इंकार नहीं किया जा सकता है कि देश में किसानों द्वारा मेहनत से उपजाए गए विविध प्रकार के कृषि उत्पादों की बिक्री से असल फायदा बिचौलिये व्यापक बड़े पैमाने पर उठाते हैं। यही कारण है कि किसान परिवार द्वारा वर्षपर्यन्त अथक मशक्कत करने के बावजूद उनकी आर्थिक स्थिति में बदलाव नहीं दिखाई पड़ता है। देश के विशाल कृषक समुदाय, विशेषतौर पर सीमांत, लघु और मध्यम स्तर के किसानों के आर्थिक उत्थान के लिए कृषक उत्पादक संगठनों (एफपीओ) की देशव्यापी स्तर पर स्थापना की गई है। वर्तमान में 5000 से अधिक एफपीओ का गठन नाबार्ड एवं विभिन्न राज्य सरकारों के अलावा लघु कृषक कृषि व्यापार संघ (एसएफएसी) द्वारा किया जा चुका है। इनसे अब तक लाखों की संख्या में कृषक जुड़ चुके हैं। एसएफएसी द्वारा इन कृषक उत्पादक संगठनों को अधिक सक्षम एवं सशक्त बनाने के लिए कई प्रकार के कार्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है। इनमें विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रम भी शामिल हैं। इनके माध्यम से खेती के अत्याधुनिक तौर-तरीकों से लेकर कटाई के बाद कृषि उपज का रखरखाव एवं मंडी तक बेचने से संबंधित व्यावहारिक गुर सिखाने का प्रयास किया जाता है। निस्संदेह यह काफी फायदेमंद पहल कही जा सकती है। ऐसी वैज्ञानिक जानकारियों से कृषकों को काफी लाभ मिलता है। इसमें आमदनी में बढ़ोतरी भी शामिल है।

यह बताना भी प्रासंगिक होगा कि एसएफएसी द्वारा कृषक संगठनों को आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाने के उद्देश्य से सरकारी संस्थाओं के सहयोग से पूंजी अनुदान, ऋण गारंटी योजना एवं उद्यम पूंजी सहायता सरीखी योजनाओं का भी संचालन किया जाता है। स्थानीय स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली इन योजनाओं का लाभ उठाते हुए कृषक न सिर्फ कृषि उत्पादों पर आधारित प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना कर सकते हैं बल्कि अन्य लघु उद्यम की स्थापना कर अपनी आय में बढ़ोतरी करने की दिशा में कदम भी बढ़ा सकते हैं। गत चार वर्षों की अवधि में लगभग 400 करोड़ रुपये के ऋण इस प्रकार कृषकों को वितरित किए गए हैं।

इन कृषक उत्पादक संगठनों से जुड़ने का एक अतिरिक्त लाभ यह भी है कि इनकी सदस्यता हासिल कर किसान भाई विभिन्न मंडियों में आकर्षक दरों पर उपज बेच सकते हैं। अब तो राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम) से भी अधिकाधिक कृषक उत्पादक संगठनों को एसएफएसी द्वारा जोड़ने के लिए गंभीरतापूर्वक प्रयास किए जा रहे हैं। इसका लाभ उठाते हुए किसान, बिचौलियों को औने-पौने दामों पर अपने उत्पाद बेचने को विवश नहीं होंगे और अपनी आय में वृद्धि कर सकेंगे। अभी तक 16 राज्यों में 634 कृषक उत्पादक संगठनों को ई-नाम में सम्मिलित किया जा चुका है। उम्मीद है कि शेष कृषक उत्पादक संगठन भी इससे जल्द जुड़ जाएंगे।

लघु कृषक व्यापार संघ नई संस्था नहीं है और गत 25 वर्षों से इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्यरत है। कृषक भाइयों को भरसक प्रयास करना चाहिए कि वे इससे समय रहते जुड़ें और अपनी आर्थिक उन्नति करें।

(अशोक सिंह)

स्पायरूलिना के गुण एवं उत्पादन

सुधीर सक्सेना और **डॉली वातलधर**
नील-हरित शैवाल संरक्षण एवं उपयोग केन्द्र
सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

“ इस शैवाल में प्रोटीन, अमीनो अम्लों एवं विटामिनों की प्रचुर मात्रा होने के अतिरिक्त यह मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों से भी समृद्ध है। क्षारीय झीलों के समीप रहने वाले लोगों द्वारा भी एक संपूरक आहार के रूप में *स्पायरूलिना* का उपयोग किया जाता है। ऐसे लोगों में कुपोषण एक गंभीर समस्या है। कानेम क्षेत्र के लेक-चाड़ में यह शैवाल प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। ‘दिहे’ के नाम से पहचाने जाने वाले इस पारंपरिक आहार की लेक-चाड़ में पुनः खोज, यूरोप के एक वैज्ञानिक मिशन द्वारा की गई थी। अब विश्वभर में व्यापक रूप से इसका संवर्धन किया जाता है। अफ्रीका के बहुत से भागों में इस शैवाल को प्राकृतिक जलस्रोत से एकत्रित कर सुखा लिया जाता है। प्रोटीन का एक समृद्ध स्रोत होने के कारण मानव आहार के रूप में इसका उपयोग निरंतर बढ़ रहा है। ”

स्पायरूलिना एक बहुकोशिकीय एवं तंतुनुमा नील-हरित शैवाल है। स्वास्थ्य एवं आहार उद्योग के साथ-साथ जल कृषि में यह प्रोटीन एवं विटामिन के संपूरक के रूप में बहुत अधिक लोकप्रिय है। मछली, झींगा और कुक्कुटपालन में जीवों के आहार में संपूरक खुराक के रूप में इसका उपयोग होता है। झींगे की वृद्धि के लिए भी इस सूक्ष्म शैवाल का चीन में उपयोग किया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र जनरल असेम्बली के सोलहवें सत्र में ‘भूख एवं कुपोषण की चुनौती से निपटने और टिकाऊ विकास के लिए *स्पायरूलिना* का उपयोग’, विषय पर एक संशोधित ड्राफ्ट प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया था। इसकी महत्ता को इसी बात से समझा जा सकता है।

स्पायरूलिना की उपयोग क्षमता

स्पायरूलिना की नम जैव मात्रा एवं इसके प्रसंस्करित उत्पादों का उपयोग कृषि, आहार उद्योग, औषधि निर्माण और जलजीवों के लिए आहार के रूप में किया जाता है। इसमें सूक्ष्मजीवरोधी (विषाणु एवं जीवाणुरोधी गुणों सहित), कैंसररोधी तथा भारी धातुओं (विषाक्त भारी धातुएं यथा कैडमियम, लैड, आयरन और मर्करी आदि) से बचाव करने के गुण होते हैं। इसके साथ ही अपनी रासायनिक संरचना के कारण यह रोगरोधिता, उद्दीपक एवं प्रतिऑक्सीकरक प्रभावयुक्त होता है।

स्पायरूलिना उगाने की प्रक्रिया

संवर्धन

स्पायरूलिना जल में उगता है तथा इसको उगाना एवं प्रसंस्करण सरल है। इसे प्रयोगशाला स्तर पर अथवा वृहद स्तर पर संवर्धन इकाइयों में, 28 ± 2^0 सेल्सियस तापमान पर, 16/8 घंटे की प्रकाश एवं अंधकार अवधि में प्रकाश (लगभग 3000-4000 लक्स) के अंतर्गत, 8.5-10.00 क्षारीय पी-एच मान (सामान्यत: NaHCO3 के साथ समायोजित करते हैं) वाले नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सल्फर, मैग्नीशियम, सोडियम क्लोराइड एवं सूक्ष्म पोषक तत्वयुक्त जल में उगाया जाता है। इस शैवाल का उत्पादन फ्लास्क, बोतल, प्लास्टिक ट्रे एवं नलिकाओं में अथवा बड़ी प्रगुणन इकाइयों में किया जा सकता है। यदि औषधीय उपयोग के लिए *स्पायरूलिना* का संवर्धन करने की आवश्यकता हो तो इसका बड़े परिमाण के फोटोबायोरिएक्टर में भी प्रगुणन किया जा सकता है।

संशोधित संवर्धन माध्यम
(जैड एम) (जरौक, 1966)

संघटक	ग्राम/लीटर
सोडियम बाईकार्बोनेट	16.5
डाईपोटेशियम हाइड्रोजन फॉस्फेट	0.5
सोडियम नाइट्रेट	2.5
पोटेशियम सल्फेट	1.0
सोडियम क्लोराइड	1.0
मैग्नीशियम सल्फेट	1.2
कैल्शियम क्लोराइड	0.4
फेरस सल्फेट	0.01
A_5 सूक्ष्मपोषक घोल	1.0
पी-एच मान	9-9.5

स्पायरूलिना की जैव-रासायनिक संरचना

- प्राय: शुष्क भार के आधार पर इसमें लगभग 60 प्रतिशत (51-71 प्रतिशत) प्रोटीन अंश होता है।
- 15-25 प्रतिशत (शुष्क भार) कार्बोहाइड्रेट होते हैं।
- न्यूक्लिक अम्ल शुष्क भार के 4.2-6 प्रतिशत की सीमा में होते हैं।
- इसमें विटामिन ए, बी ($बी_1$, $बी_2$, $बी_3$, $बी_6$, $बी_9$), सी, डी एवं ई पाये जाते हैं। यह पोटेशियम, कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, मैग्नीज, फॉस्फोरस, सोडियम एवं जिंक का भी अच्छा स्रोत है।
- बीटा केरोटीन, जैंथोफिल, क्लोरोफिल-ए सहित वर्णकों तथा फायकोबिलिप्रोटीन जैसे कि फायकोसायनिन एवं एल्लोफायकोसायनिन का भी अच्छा स्रोत है।
- नमी स्तर 3-6 प्रतिशत होता है।

स्पायरूलिना-बाजार

व्यावसायिक रूप से *स्पायरूलिना* टेबलेट, कैप्सूल अथवा पाउडर के रूप में उपलब्ध है। इसके उपभोग में उल्लेखनीय बढ़ोतरी तब हुई जब अमेरिका के एक दैनिक समाचार पत्र में मुखपृष्ठ पर एक लेख छपा जिसमें डाइटिंग कर रहे व्यक्तियों के लिए, भूख में कमी करने वाले रूप में *स्पायरूलिना* के गुणों को दर्शाया गया था। वर्तमान समय में उच्च गुणवत्तायुक्त *स्पायरूलिना* का उत्पादन करने वाली कम्पनियां, बाजार में टिके रहने के लिए गुणवत्ता के पहलू पर जोर देती हैं। इसके साथ ही प्राकृतिक रंगों और एंजाइम आदि का उपयोग कर गुणवर्धित उत्पाद भी तैयार कर रही हैं। *स्पायरूलिना* के प्रमुख उत्पादक एशिया एवं अमेरिका में हैं। वैश्विक उत्पादन के 10 प्रतिशत से अधिक का उत्पादन चीन करता है। विश्व का सबसे बड़ा *आर्थोस्पायरा* उत्पादन संयंत्र, दक्षिण कैलिफोर्निया में स्थित अर्थराइज न्यूट्रीशनल्स का है, जो प्रतिवर्ष 450 टन का उत्पादन करता है। वर्ष 2016 में *स्पायरूलिना* का बाजार भाव अमरीकी डॉलर 35/कि.ग्रा. था। भारत की कम्पनियां जैसे कि पैरी, एंटिना, डाबर, एल्जेन बायोटेक, हायड्रोलेना बायोटेक एवं हैश बायोटेक आदि *स्पायरूलिना* का वृहद स्तर पर उत्पादन एवं विपणन कर रही हैं।

स्पायरूलिना का संग्रहण

ए. सूक्ष्म पोषक तत्व घोल (ग्राम/लीटर)

बोरिक अम्ल	2.86
मैग्नीज क्लोराइड	1.81
जिंक सल्फेट	0.222
सोडियम मॉलिब्डेट	0.0177
कॉपर सल्फेट	0.079

***स्पायरूलिना* के अधिक मात्रा में संवर्धन के लिए पोषक तत्व**

संघटक	(ग्राम/मि.ली.)
सोडियम बाईकार्बोनेट	9.0
सुफला (एन:पी:के=15:15:15)	1.0
सोडियम क्लोराइड	1.0
मैग्नीशियम सल्फेट	0.1
सिंगल सुपर फॉस्फेट	0.1
पी-एच मान	9.0

संग्रहण एवं शुष्कन

यह एक तंतुनुमा शैवाल है, इसलिए इसका संग्रहण स्टेनलैस स्टील के बने स्क्रन और मसलिन कपड़े या नायलॉन से बनी जाली द्वारा आसानी से किया जा सकता है। शैवाल निकालने के बाद शेष जल का पुन: *स्पायरूलिना* संवर्धन में उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार से प्राप्त नम जैवमात्रा स्वच्छ और स्वादिष्ट होती है। शैवाल जैवमात्रा का लगभग एक चौथाई, जो शेष रह जाता है, उसका उपयोग अगली संतति के लिए बीज के रूप में किया जा सकता है। संवर्धन माध्यम से शैवाल निकालने के लिए प्रात:काल सबसे उपयुक्त समय है, क्योंकि कम तापमान पर कार्य करना सुविधाजनक है। *स्पायरूलिना* के शुष्कन के लिए अधिक धूप उपलब्ध होती है तथा साथ ही संग्रहित जैवमात्रा में प्रोटीन प्रतिशत भी अधिक रहता है। संग्रह किये गये इस नम शैवाल का सीधे उपयोग कर सकते हैं या उपयोगी फार्मुलेशन तैयार करने के लिए इसे सुखाया जा सकता है। धूप में सुखाने के लिए स्पायरूलिना को प्लास्टिक शीट पर फैला दिया जाता है और शुष्क जैवमात्रा, जिसमें लगभग 20 प्रतिशत नमी होती है, को खुरचकर अलग कर लिया जाता है। ■

स्पायरूलिना की बहुगुणन इकाइयां

महत्व

कुछ रोगों जैसे कि एड्स/एच आई.वी. तथा संधिशोध (आर्थराइटिस) के नियंत्रण में यह शैवाल उपयोगी है। *स्पायरूलिना*, खिलाड़ियों के लिए पोषक आहार, शरीर की प्राकृतिक रूप से सफाई एवं निराविषीकरण (डिटॉक्सीफिकेशन), हृदयवाहिका के कार्य एवं अच्छे कॉलेस्ट्राल में सुधार करने, रोगरोधी तंत्र के सुदृढ़ीकरण, जठरांत्र एवं पाचक तंत्र को स्वस्थ रखने तथा प्रतिऑक्सीकारक सुरक्षा के साथ कैंसर का खतरा कम करने वाला माना जाता है। एक स्वस्थ एवं संतुलित खुराक के साथ संयोजन में इसकी की पोषण संबंधी रूपरेखा अत्यधिक प्रभावी है। एक कि.ग्रा. *स्पायरूलिना* का पोषण की दृष्टि से लाभ लगभग 1,000 कि.ग्रा. सब्जियों के समतुल्य है।

गुणकारी *स्पायरूलिना*

लेखकों से आग्रह

लेखक बंधु *खेती* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ ई-मेल पर ही भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1500 शब्दों की सीमा रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी ई-मेल के माध्यम से भेज सकते हैं। भेजने के लिए कृपया कृतिदेव 010 टाइप फेस का प्रयोग करें।

हमारा ई-मेल पता है:
khetidipa@gmail.com

–संपादक

कैसे करें उन्नत बकरी पालन

चेतना गंगवार[1]**, सुरेश दिनोंकर खर्चे**[1]**, श्रीप्रकाश सिंह**[2]
और **अनुज कुमार सिंह सिकरवार**

"बकरी पालन पौराणिक समय से ही पशुपालन का एक अभिन्न अंग रहा है। भूमिहीन कृषि श्रमिक, छोटे सीमांत किसान तथा सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों में बकरी पालन की लोकप्रियता अत्यधिक है। बहुउद्देशीय उपयोगिता एवं सरल प्रबंधन पशुपालकों में बकरी पालन की ओर बढ़ते रुझान के प्रमुख कारण हैं। भारत में बकरियों की संख्या 1351.7 लाख है, जिसमें से अधिकांश (95.5 प्रतिशत) ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। केवल अल्प भाग (4.5 प्रतिशत) ही शहरी क्षेत्रों में है। भारत में होने वाले कुल दुग्ध और मांस उत्पादन में बकरी का उत्कृष्ट योगदान है। बकरी का दूध और मांस का भारत में उत्पादित कुल दुग्ध और मांस में क्रमश: 3 प्रतिशत (46.7 लाख टन) और 13 प्रतिशत (9.4 लाख टन) हिस्सा है। ये आंकड़े स्पष्ट रूप से भारतीय समाज में बकरी पालन के व्यवसाय के महत्व को प्रमाणित करते हैं।"

बकरी पालन व्यवसाय से लाभ कमाने के लिए बकरियों में पोषण, स्वास्थ्य एवं प्रजनन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर बकरी पालन से अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

बकरी की नस्ल का चयन

व्यावसायिक बकरी पालन आरंभ करते समय बकरी की नस्ल का चयन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। बकरी प्रजाति का चयन, बकरी पालन का उद्देश्य, क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, उपलब्ध चारा-दाना बाजार मांग पर निर्भर करता है। सामान्यत: यह ध्यान देना चाहिए कि बकरी की नस्ल उसी जलवायु से हो जहां व्यवसाय शुरू करना है। बकरी पालन के लिए अच्छी नस्ल के प्रजनक बकरे बाहर से लाकर स्थानीय बकरियों से गर्भाधान कर नस्ल सुधार का कार्य किया जा सकता है। प्राय: देखा गया है कि जो बकरी अधिक मेमने देती है, उसके मेमने कम वजन के होते हैं। दूसरी ओर जो बकरी कम मेमने देती है उसके मेमने बड़े तथा अधिक वजन वाले होते हैं। इस प्रकार सभी प्रजातियां लगभग समान लाभ देती हैं।

[1]भाकृअनुप-केंद्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान, फरह, मथुरा (उत्तर प्रदेश); [2]पंडित दीनदयाल उपाध्याय पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय एवं गौ अनुसंधान संस्थान, मथुरा (उत्तर प्रदेश)

प्रजनक बकरों का चयन

बकरे के जनक शुद्ध नस्ल के रहे हों तथा स्वयं भी शारीरिक रूप से स्वस्थ हों। बकरा किसी आनुवंशिक रोग से ग्रसित न हो एवं उसका वाहक भी न हो। जनक उच्च प्रजनन क्षमता वाले रहे हों। इनकी सन्तानों में मृत्युदर का स्तर कम रहा हो। जनक में दूध, मांस या रेशे की उत्पादक क्षमता उच्च स्तरीय रही हो। बकरे में पूर्ण रूप से विकसित जननांग हों एवं उसकी प्रजनन क्षमता भी उच्च स्तरीय हो। वह विभिन्न उम्र सोपानों (जन्म, तीन माह, छह माह, नौ माह और बारह माह) पर अधिक भारधारक रहा हो। बकरा देखने में आकर्षक एवं क्षमतावान होना चाहिए।

बकरी आवास प्रबंधन

बकरी के आवास की लंबाई वाली भुजा पूर्व-पश्चिम दिशा में होनी चाहिए। लंबाई वाली दीवार को एक से डेढ़ मीटर ऊंचा बनवाने के पश्चात दोनों तरफ जाली लगानी चाहिए। बाड़े का फर्श कच्चा तथा रेतीला होना चाहिए। उसमें समय-समय पर बिना बुझे चूने का छिड़काव करते रहना चाहिए। वर्ष में एक से दो बार बाड़े की मिट्टी बदल देनी चाहिए। 80 से 100 बकरियों के लिए बाड़ा 20 × 6 वर्ग मीटर ढका हुआ तथा 12

बकरी समूह

× 20 वर्ग मीटर खुला जालीदार क्षेत्र होना चाहिए। बकरा, बकरी तथा मेमनों को (ब्याने के एक सप्ताह बाद) अलग-अलग बाड़ों में रखना चाहिए। मेमनों को बकरी के पास दूध पिलाने के समय ही लाना चाहिए। अधिक

स्वास्थ्य प्रबंधन

बकरी पालन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि बकरियां स्वस्थ तथा निरोगी रहें। यदि वे अस्वस्थ या बीमार हो जाएं, तो उनके रोग को पहचान कर तत्काल उपचार करें। इससे बकरियों को मृत्यु से बचाकर आर्थिक हानि से बचा जा सकता है। बकरियों में पी.पी.आर., ई.टी., खुरपका, मुंहपका, गलघोंटू तथा बकरी चेचक रोगों के टीके अवश्य लगवाने चाहिए। कोई भी टीका 3-4 माह की आयु के उपरांत ही लगाया जाता है। इसलिए बरसात आते ही इन्हें रोगों से बचाने के लिए यथासंभव प्रयास करना चाहिए। ये सभी रोग बहुत तेजी से फैलते हैं। इन रोगों के लक्षण देखते ही यथाशीघ्र उपचार के उपाय करने चाहिए। इन रोगों का देसी इलाज भी प्रभावी होता है। पशु चिकित्सक को दिखाकर उपचार कराया जा सकता है। बीमार बकरी को तुरंत बाड़े से अलग करके चिकित्सा करानी चाहिए। ठीक होने पर बाड़े में पुन: लाना चाहिए। अंत:परजीवी नाशक दवा वर्ष में दो बार पिलानी चाहिए (एक वर्षा से पूर्व दोबारा वर्षा के उपरांत)। बाह्य परजीवीनाशक दवा के पानी से सावधानीपूर्वक बकरियों को स्नान कराने से परजीवी मर जाते हैं।

बकरियों में जनन प्रबंधन

बकरी पालन व्यवसाय को सफल बनाने के लिए बकरियों में निम्न गुणों का पाया जाना आवश्यक है :

- बकरी कम आयु में जनन योग्य हो जाए।
- बकरी प्रति ब्यांत अधिक बच्चे दे।
- बकरी ब्याने के बाद जल्दी पुन: गर्भधारण कर ले।
- बकरी के जीवनकाल में अधिकाधिक बच्चे पैदा हों।

बकरियों में परिपक्व होने की आयु उनकी नस्ल, आकार, खानपान व देखभाल पर निर्भर करती है। प्राय: आठ से बारह माह में गर्मी के लक्षण प्रकट करने लगती हैं। इनको इस आयु से दो-तीन महीने देर से गर्भित कराना उचित रहता है, ताकि जननतंत्र पूर्ण रूप से विकसित हो सके। इनका मदचक्र लगभग 18-21 दिनों का होता है और बकरियां लगभग 12-36 घंटे तक मदकाल में रहती हैं। गर्मी आने के 12 से 18 घंटे के बाद उनको गर्भित कराना चाहिए। अप्रैल-मई तथा अक्टूबर-नवंबर में गाभिन कराने पर मेमने अनुकूल मौसम में प्राप्त होते हैं।

सर्दी, गर्मी व बरसात में बकरियों के बचाव का व्यापक रूप से प्रबंध करना चाहिए।

बकरी पोषण प्रबंधन

बकरी को प्रतिदिन उसके भार का 3-5 प्रतिशत शुष्क आहार खिलाना चाहिए। एक वयस्क बकरी को 1-3 कि.ग्रा. हरा चारा, 500 ग्राम से 1 कि.ग्रा. भूसा (यदि दलहनी हो तो और अच्छा है) तथा 150 ग्राम से 400 ग्राम तक दाना प्रतिदिन खिलाना चाहिए। दाना हमेशा दला हुआ व सूखा ही दिया जाना चाहिए और उसमें पानी नहीं मिलाना चाहिए। साबुत अनाज नहीं खिलाना चाहिए। दाने में 60-65 प्रतिशत अनाज (दला हुआ) 10-15 प्रतिशत चोकर, 15-20 प्रतिशत खली (सरसों की खली छोड़कर), 2 प्रतिशत मिनरल मिक्स्चर तथा एक प्रतिशत नमक का मिश्रण होना चाहिए। बकरियों को प्रजनन काल के एक माह पूर्व से ही पचास से सौ ग्राम तक दाना अवश्य देना चाहिए, जिससे स्वस्थ बकरी से अधिक मेमने पैदा हो सकें। इसी प्रकार बकरों को भी प्रजनन काल के दौरान प्रतिदिन सौ ग्राम दाना अतिरिक्त मात्रा में देना चाहिए। बकरियों को साफ पानी पिलाना चाहिए। नदी, तालाब व गड्ढे में जमा हुए गन्दे पानी को पीने से बकरियों को बचाना चाहिए।

मेमनों का प्रबंधन

जन्म के उपरांत सर्वप्रथम नवजात मेमने के नथुनों को साफ कर उसे सामान्य रूप से सांस लेने में मदद करनी चाहिए। जन्म के पश्चात मेमने को उसकी मां के साथ रहने के लिए पहले से तैयार बाड़े में स्थानान्तरित कर देना चाहिए। मेमनों को सूखी-मुलायम घास की बिछावन वाले स्थान पर रखना चाहिए। बकरी ब्याने पर बच्चे की नाल दो इंच छोड़कर नये ब्लेड से काटकर टिंचर आयोडिन लगा देना चाहिए। नवजात मेमने को 30 मिनट के अंदर बकरी का पहला दूध (खीस) पिला देना चाहिए। दूध दो बार मेमनों को पिलाना अति उत्तम है। मेमनों को जन्म के पन्द्रह से बीस दिनों के अंदर सींग रहित कर सकते हैं।

उपरोक्त दिये गए बिन्दुओं पर ध्यान देकर बकरीपालक अधिक आमदनी प्राप्त कर सकते हैं तथा बकरियों को स्वस्थ एवं रोगमुक्त रखकर अधिक मेमने भी प्राप्त कर सकते हैं। ■

नवजात मेमने के साथ बकरी

बारानी कृषि में हाइड्रोजैल का उपयोग

सुरेश कुमार, तृशा राय, लेख चंद, बांके बिहारी, मदन सिंह, एस.एस. श्रीमाली, एम. मुरूगानंदम, यू.के. मौर्या, दर्शन एम. कदम, राकेश कुमार, एस.के. शर्मा और **अनिल मलिक**

भाकृअनुप-भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, देहरादून (उत्तराखंड)

" भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया पूसा हाइड्रोजैल एक दानेदार सिंथेटिक पॉलीमर है। पानी में अघुलनशील यह जैल पानी की बहुत बड़ी मात्रा को सोख सकता है। यह अपने आयतन का 80 से 180 गुना एवं अपने वजन का 400 गुना पानी सोखने की क्षमता रखता है। अपने अनुकूलन गुण के कारण जब इस को फसलें उगाने के लिए खेतों में प्रयोग किया जाता है तो जल उपयोग दक्षता एवं फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है। इसको फसलों की बुआई के समय तब प्रयोग किया जाना चाहिए, जब खेत में नमी हो। अपने गुणों के अनुसार यह खेत की नमी को अपने अंदर बांधकर रखता है तथा धीरे-धीरे फसल की आवश्यकतानुसार नमी को उपलब्ध करवाता है। यह बारानी, वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए लाभप्रद होने के साथ-साथ उन क्षेत्रों के लिए भी उपयोगी है, जहां सिंचाई जल सीमित मात्रा में उपलब्ध हो। देश के उत्तर-पश्चिमी, मध्य एवं प्रायद्वीप क्षेत्रों में किए गए अध्ययनों में यह देखा गया है कि गेहूं की फसल में अगर बुआई के समय हाइड्रोजैल का प्रयोग किया गया है तो वहां पर चार सिंचाइयों के स्थान पर दो सिंचाई देने पर भी गेहूं के उत्पादन पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है। इस जैल की उपयोगिता उन क्षेत्रों के लिए और भी बढ़ जाती है जहां सिंचाई जल की उपलब्धता सीमित है। वहां सीमित सिंचाई तथा हाइड्रोजैल दोनों के संयुक्त प्रयोग से अधिक क्षेत्रफल में बुआई कर समुचित उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। कार्बोक्सी मिथाइल सेलुलोज आधारित यह जैल भूमि में 2 से 5 वर्षों में जैव अपघटित होकर हानि व प्रदूषणरहित प्राकृतिक रूप से पूर्णतया मिल जाता है। "

देश में खाद्यान्न संबंधित आत्मनिर्भरता लाने में हरित क्रान्ति का विशेष योगदान रहा है। इसको लाने के लिए नई कृषि तकनीकों, बीज, उर्वरक और कृषि रसायनों जैसे उन्नत निवेशों के साथ-साथ सिंचाई जल की भी प्रमुख भूमिका रही है। कृषि क्षेत्र से प्राप्त हुई इस आत्मनिर्भरता में सिंचाई जल के महत्व को भी नकारा नहीं जा सकता है, क्योंकि अभी भी देश के कुल कृषि क्षेत्रफल (141.43 मिलियन हैक्टर) का केवल 48.5 प्रतिशत ही सिंचित क्षेत्रफल (68.10 मिलियन हैक्टर) है। यह कुल खाद्यान्न उत्पादन में 60 प्रतिशत से भी अधिक का योगदान करता है।

देश की निरंतर बढ़ती आबादी की खाद्य संबंधित सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए खाद्यान्न उत्पादन में 5.1 मिलियन टन की वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य प्राप्त किया जाना वांछनीय है। यह एक बड़ा कठिन लक्ष्य है। आजादी के 70 वर्षों के बाद भी हम मात्र 3.1 मिलियन टन वार्षिक की दर से ही खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि कर पाये हैं। पिछले कुछ वर्षों के आंकड़ों पर गौर करें तो देश में खाद्यान्न उत्पादन में ठहराव दिखाई देना शुरू हो गया है। वर्ष 2010-11 में देश का कुल खाद्यान्न उत्पादन 260 मिलियन टन था। यह वर्तमान में 280 मिलियन टन के आसपास तक ही पहुंच पाया है। देश के खाद्यान्न उत्पादन में पिछले कुछ वर्षों में जो 15 से 20 मिलियन टन का उतार-चढ़ाव देखा गया है, वह भी देश में मानसून की स्थिति पर निर्भर करता है।

कृषकों को हाइड्रोजैल उपयोग का प्रशिक्षण

इस प्रकार अगर देश में खाद्यान्न संबंधित आत्मनिर्भरता को बरकरार रखना है तो देश के वर्षा आधारित बारानी कृषि क्षेत्रों की उत्पादकता में वृद्धि करना ही एकमात्र उपाय होगा। वर्तमान में भी देश में खाद्यान्न फसलों के अंतर्गत 42.10 प्रतिशत क्षेत्रफल वर्षा आधारित असिंचित दशाओं वाला है। इसे देश में उपलब्ध जल संसाधनों व सिंचाई साधनों की सीमा की वजह से सिंचित किया जाना संभव प्रतीत नहीं होता है। देश के विभिन्न राज्यों में खाद्यान्न फसलों के अंतर्गत एक बहुत बड़ा असिंचित क्षेत्र है (सारणी-1)। अगर उसमें नमी संरक्षण की तकनीकों का उपयोग किया जाये तो देश में कृषि उत्पादन में बड़ी वृद्धि दर्ज कर खाद्यान्न संबंधित आत्मनिर्भरता को सुनिश्चित किया जा सकता है।

किसानों के खेतों पर परीक्षण

भाकृअनुप-भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, देहरादून (उत्तराखंड) द्वारा देहरादून जनपद के रायपुर प्रखंड स्थित फार्मर्स फर्स्ट परियोजना के अंतर्गत अंगीकृत किए गए बड़ासी गांव में कृषकों के खेतों पर गेहूं की फसल में हाइड्रोजैल के उपयोग संबंधित परीक्षण किए गए। समुद्र तल से 680 मीटर की ऊंचाई पर स्थित बड़ासी गांव की कृषि, वर्षा आधारित बारानी है। लगभग 1600 मि.मी. वार्षिक वर्षा के साथ यहां पर अधिकतम व न्यूनतम तापमान का औसत क्रमशः 32.2^0 व 10^0 सेल्सियस रहता है। पूर्णतया बारानी परिस्थितियों में किए गए इस प्रयोग में उत्तर-पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में गेहूं की वीएल-907 किस्म उगाई गई। इसके अंतर्गत दो उपचार, पूसा हाइड्रोजैल के प्रयोग

के साथ तथा बिना इसके प्रयोग किए बुआई रखे गए। नवम्बर, 2017 को की गई बुआई में किसानों के खेतों में 5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से पूसा हाइड्रोजैल का इस्तेमाल किया गया। बुआई से पहले खेत की तैयारी के समय की जाने वाली अंतिम जुताई से पहले सूखी मृदा के साथ हाइड्रोजैल को 10:1 के अनुपात में मिलाकर खेत में बिखेरा गया। इसे जुताई करके खेत में मिला दिया गया। कृषकों द्वारा बोये गए गेहूं के खेतों में प्रयोग की गई अन्य कर्षण क्रियाएं जैसे खेत की तैयारी, बुआई की विधि (छिटकवां विधि), निराई-गुड़ाई, खाद व उर्वरक का प्रयोग, कटाई व गहाई आदि हाइड्रोजैल व बगैर हाइड्राजैल वाले खेतों में एक समान की गई।

बारानी परिस्थितियों में ग्राम बड़ासी में गेहूं की फसल में हाइड्रोजैल प्रयोग करने पर उत्साहवर्धक परिणाम प्राप्त हुए। हाइड्रोजैल प्रयुक्त फसल में कल्लों की संख्या/मी^{2}, बाली की लंबाई तथा दाने की पैदावार, हाइड्रोजैल रहित फसल की अपेक्षा अधिक दर्ज की गई। हाइड्रोजैल प्रयुक्त फसल में नमी की कमी के लक्षण (फसल कुम्हलाना व पत्तियों का सिकुड़ना आदि) नहीं पाये गए।

सारणी 1. देश के विभिन्न राज्यों में खाद्यान्न फसलों के अंतर्गत असिंचित क्षेत्र का प्रतिशत

क्र. सं.	राज्य	खाद्यान्न फसलों के अंतर्गत असिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत
1.	झारखंड	90.9
2.	असोम	89.7
3.	महाराष्ट्र	81.4
4.	कर्नाटक	73.1
5.	ओडिशा	70.8
6.	छत्तीसगढ़	68.7
7.	राजस्थान	67.5
8.	उत्तराखंड	55.6
9.	गुजरात	53.9
10.	पश्चिम बंगाल	51.6
11.	तमिलनाडु	43.6
12.	मध्य प्रदेश	41.8
13.	तेलंगाना	34.6
14.	आंध्र प्रदेश	33.4
15.	बिहार	30.9
16.	उत्तर प्रदेश	21.6
17.	हरियाणा	8.0

स्रोत: कृषि अनुसंधान डाटा पुस्तिका-2017, भाकृअनुप-भारतीय सांख्यिकी अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ-188

हाइड्रोजैल युक्त गेहूं की फसल में दाने की पैदावार खेत दर खेत 12 से 18 प्रतिशत अधिक प्राप्त हुई। एक बार हाइड्रोजैल प्रयोग करने से इसका असर भूमि में 5 साल तक बना रहता है, अत: हर बार इसे खरीदने तथा खेत में प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक फसल में 5 साल में होने वाले लाभों का योग इसे अत्यधिक उपयोगी सिद्ध करता है।

कृषकों के खेतों पर किए गए परीक्षण

- बारानी परिस्थितियों में हाइड्रोजैल के प्रयोग से अनाज, दलहन, तिलहन व बागवानी फसलों के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि फसल बुआई के समय हाइड्रोजैल को खेत में मिलाते समय पर्याप्त नमी हो।
- देश में अन्य स्थानों पर किए गए अनुसंधान परिणामों से ये नतीजे भी प्राप्त हुये हैं कि गेहूं फसल को बिना हाइड्रोजैल के पांच सिंचाइयों के साथ उगाया जाता है। हाइड्रोजैल के प्रयोग के साथ मात्र तीन सिंचाइयां देकर अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इससे सिंचाई जल की बचत भी की जा सकती है। अत: देश के जिन क्षेत्रों में सीमित मात्रा में सिंचाई जल उपलब्ध है वहां पर कम सिंचाई के साथ हाइड्रोजैल का प्रयोग किया जा सकता है। सिंचाई जल में की गई बचत द्वारा अतिरिक्त बुआई क्षेत्र का विस्तार किया जा सकता है।
- देश के हिमालयी राज्यों के निचले पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकतर रबी फसलों में हाइड्रोजैल का प्रयोग अति लाभकारी है, क्योंकि इन क्षेत्रों में सामान्यत: सर्दी में बरसात हो जाती है। इन क्षेत्रों में गेहूं की बुआई के समय पर्याप्त नमी रहती है, अत: अगर हाइड्रोजैल का प्रयोग किया जाये तथा फसल अवधि के दौरान एक-दो बार वर्षा हो जाये तो इन क्षेत्रों से सिंचित दशाओं जैसा ही उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।
- हाइड्रोजैल के प्रयोग से मृदा के भौतिक गुणों जैसे आभासी घनत्व, सरंध्रता, जल धारण क्षमता, पारगम्यता व अंत:स्पंदन में सुधार होता है। इसके साथ ही मृदा के अंदर लाभप्रद जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है। ये विभिन्न फसलों के सफल उत्पादन एवं उपज वृद्धि में सहायक होते हैं।
- हाइड्रोजैल, खेतों में प्रयुक्त खाद एवं उर्वरकों की उपयोग दक्षता में वृद्धि करने में भी सहायक है। नमी सहेजकर रखने के गुण के कारण यह खाद व उर्वरकों के पोषक तत्वों को अपने साथ सहेजकर रखता है। यह नमी को धीरे-धीरे फसल की आवश्यकतानुसार मुक्त करता है। जल सोखने के इस गुण के कारण निक्षालन द्वारा खेतों में होने वाली पोषक तत्वों की हानि भी कम हो जाती है।
- हाइड्रोजैल का प्रयोग प्रति 5 वर्ष में एक बार करने की आवश्यकता होती है। इसमें व्यय एवं श्रम शक्ति का न्यूनतम उपयोग होता है।
- मृदा की भौतिक अथवा रासायनिक दशाओं पर हाइड्रोजैल का कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पाया गया है।

घटते भूजल स्तर, कमजोर पड़ते प्राकृतिक जलचक्र तथा बदलती जलवायु की स्थिति में हाइड्रोजैल बारानी तथा सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों में फसलों के लिए वरदान साबित हो सकता है। अत: बारानी तथा सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों के किसानों के बीच इसकी जानकारी देना लाभप्रद सिद्ध होगा। ■

आय-व्यय

बारानी परिस्थितियों वाले बड़ासी गांव में गेहूं की फसल में हाइड्रोजैल का प्रयोग करने से 12.70 क्विंटल भूसे तथा 14.55 क्विंटल दाने का प्रति हैक्टर अतिरिक्त उत्पादन प्राप्त किया गया। इसकी कीमत लगभग 32,540 रुपये (6,350 रुपये भूसा+26,190 रुपये दाना) है। वर्तमान में हाइड्रोजैल की बाजार में कीमत 1200 से 1400 रुपये प्रति कि.ग्रा. है तथा प्रति हैक्टर 5 कि.ग्रा. की दर से खेतों में प्रयोग करने से 7,000 रुपये प्रति हैक्टर का खर्च आता है। इस प्रकार हाइड्रोजैल के प्रयोग से बारानी गेहूं में 25,540 रुपये (32,540 रुपये-7,000 रुपये = 25,540 रुपये) की अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

IFFCO

पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

50 1967 2017
स्वर्ण जयंती
Golden Jubilee

इफको के स्वर्णिम 50 वर्ष

कृषि, सहकारिता एवं ग्रामीण विकास को समर्पित

नीम लेपित यूरिया | एन पी के | डी ए पी | एन पी | बॉयो फर्टिलाइजर

वॉटर सोल्यूबल फर्टिलाइजर | माईक्रो न्यूट्रीएन्ट फर्टिलाइजर

Follow us :

YouTube IFFCO live
iffcolive.com

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व

INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED

IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop

चने की उन्नत किस्म 'सीएसजे-51'

वेद प्रकाश यादव[1], एस.जे. सिंह[3], जी.पी. दीक्षित[2], एन.पी. सिंह[2] और वी.एस. यादव[1]

"विशाल जनसंख्या के लिए संतुलित पोषक आहार उपलब्ध कराने एवं किसान की आय दोगुनी करने के साथ ही देश में प्रोटीन का प्रमुख स्रोत हैं दलहनी फसलें। इनके उत्पादन से प्रोटीन के अभाव को संतुलित कर देश के 90 प्रतिशत से अधिक शाकाहारी लोगों को संतुलित प्रोटीन की पूर्ति की जाती है। ऐसी स्थिति में दलहनी फसलों का उत्पादन बढ़ाना अति आवश्यक है। प्रोटीन की पूर्ति के लिए प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 108 ग्राम दाल की आवश्यकता होती है, जबकि भारत में केवल 36 ग्राम दाल की मात्रा ही उपलब्ध हो पाती है। राजस्थान में यह मात्रा 42 ग्राम है। विश्व में अधिकांश शाकाहारी जनसंख्या के लिए प्रोटीन का एकमात्र स्रोत दलहन ही है। अनाज पर आधारित भोजन में दलहन सम्मिलित करने पर पोषणयुक्त संतुलित आहार उपलब्ध होता है।"

दलहन को धान्य के साथ मिलाकर भोजन में लिया जाये तो भोजन का जैविक मान बढ़ जाता है। औसत रूप से दालों में 20-31 प्रतिशत तक प्रोटीन पाई जाती है, जो कि अनाज वाली फसलों की तुलना में 2.5-3.5 गुना अधिक होती है। प्रति व्यक्ति दालों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए अन्य दलहनों के साथ-साथ चने की उत्पादकता एवं उत्पादन बढ़ाने के लिए एकीकृत प्रयास करने की आवश्यकता है, जो भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि करता है। दलहनी फसलों से पशुओं को पौष्टिक चारा एवं प्रोटीनयुक्त संतुलित आहार प्राप्त होता है। इनकी जड़ में उपस्थित राइजोबियम द्वारा जीवाणुओं की सहभागिता से भूमि में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण भी होता है।

दलहनी फसलें सुपाच्यता में भी सभी खाद्यान्नों में सर्वोपरि हैं। मानव शरीर में पोषक तत्व तथा ऊर्जा की पूर्ति दालों से होती है। दुनिया में सबसे ज्यादा व्यंजन, दलहनी खाद्यान्नों मुख्य रूप से चना, मूंग, मसूर एवं मोठ से बनाये जाते हैं। नमकीन एवं मिठाइयां भी चने एवं मूंग से बनाई जाती हैं। इसके साथ-साथ रोस्टेड दलहनों का उपयोग भी विश्व स्तर पर बढ़ रहा है। चना एक पौष्टिक दलहन के रूप में विख्यात एवं बहुउपयोगी है। इसकी दाल से मिठाइयां, बेसन (कढ़ी) के बनने के साथ ही यह औषधीय गुणों के कारण ताकत और ऊर्जा, शुक्राणुओं का बढ़ना, कब्ज का दुश्मन, जनन क्षमता में वृद्धि, मूत्र संबंधी समस्या, मधुमेह (डायबिटीज), पथरी, मूत्राशय अथवा गुर्दा रोग, जुकाम, बहुमूत्रता, बवासीर, पित्ती निकलना, पीलिया, सिर का दर्द, कफ विकृति, नासिका शोथ, एनीमिया से बचाता है। चने की खेती करने से पशुओं को उच्च गुणवत्ता व प्रोटीनयुक्त चारे की उपलब्धता हो जाती है।

भारत में इसकी खेती व्यावसायिक

उन्नत बीज

प्राचीनकाल से ही उन्नत बीज कृषि का एक आवश्यक तत्व रहा है। उर्वर भूमि के बाद कृषि के लिए उन्नत बीज को ही महत्व दिया गया है। उन्नत बीज केवल शुद्ध किस्मों से प्राप्त होता है और स्वस्थ बीज से ही अच्छी फसल मिल सकती है, जो श्रेष्ठ उत्पादन दे सकती है। हरित क्रांति में भी उन्नत बीजों (किस्मों) को ही श्रेय दिया गया है। उन्नत किस्मों के बीज आधुनिक कृषि का प्रमुख आधार हैं। इन किस्मों के बीजों की प्रति हैक्टर पैदावार प्रचलित देसी किस्मों के बीजों से कई गुना अधिक होती है। सी.एस.जे.-515 नामक चने की विकसित किस्म अधिक उत्पादकता के साथ-साथ प्रतिकूल अवस्थाओं के प्रति अधिक सहनशील एवं प्रतिरोधी है। अत: चने की भी आधुनिक तकनीकी से सस्य क्रियाएं करने से सी.एस.जे.-515 से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

[1]निदेशक एवं चना परियोजना समन्वयक, भाकृअनुप-भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर (उत्तर प्रदेश); [2]आई आई पी आर, कानपुर, [3]निदेशक एवं पूर्व निदेशक, राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा-जयपुर-302 018 (राजस्थान), श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

स्तर पर विभिन्न राज्यों-मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश एवं कर्नाटक में होती है। अन्य उत्पादन करने वाले प्रांतों में बिहार, गुजरात, हरियाणा, पंजाब, ओडिशा, तमिलनाडु एवं पश्चिम बंगाल सम्मिलित हैं।

राजस्थान में चना मुख्य रूप से बारानी क्षेत्रों में बोया जाता है। राजस्थान में चने की खेती खरीफ में होने वाली वर्षा से प्रभावित होती है। सितंबर-अक्टूबर में अच्छी वर्षा होती है तो चने का क्षेत्रफल काफी बढ़ जाता है। अगस्त में वर्षा समाप्त होने पर चने का क्षेत्रफल आधे से भी कम रह जाता है।

सी.एस.जे.-515 (अमन) का विकास 2016 में आर.ए.आर.आई., दुर्गापुरा में बारानी खेती के लिए हुआ। इसकी उपज आरएसजी-931 (1800-2000 कि.ग्रा./हैक्टर), आरएसजी-888 (1800-2200 कि.ग्रा./हैक्टर) और जीएनजी-469 की तुलना में लगातार उच्च (2000-2500 कि.ग्रा./हैक्टर) प्राप्त हुई है। इसकी औसतन परिपक्वता 125-135 दिन और बीज का आकार (16.0 ग्राम) मोटा है। इसमें विल्ट, रूट रॉट, कॉलर रॉट, एस्कोच्यटा ब्लाइट, बी.जी.एम. और स्टंट के साथ ही फलीछेदक की प्रतिरोधी क्षमता पाई गई। इसमें प्रोटीन (20.8 प्रतिशत), चीनी (6.8 प्रतिशत) और जल अवशोषण क्षमता (0.78 प्रतिशत) पायी जाती है। अच्छी गुणवत्ता के साथ वांछनीय ऊंचाई होने के कारण तने के ऊपरी भाग पर फली लगती है, जिसके कारण यह यांत्रिक फसल कटाई के लिए भी उपयुक्त पाई गई।

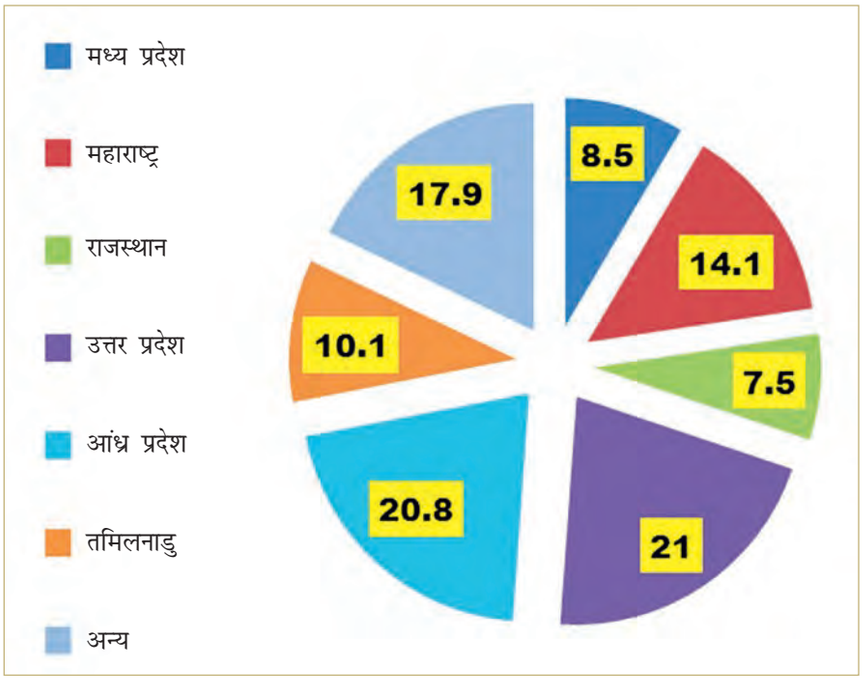

चना उत्पादन में प्रमुख राज्यों की हिस्सेदारी

सारणी 1. चने की बुआई का समय

क्षेत्र	बुआई का समय	
	सामान्य	पछेती
उत्तर भारत	15 अक्टूबर से 15 नवंबर	15 नवंबर से 15 दिसंबर
मध्य भारत	10 अक्टूबर से 30 अक्टूबर	1 नवंबर से 30 नवंबर

सारणी 2. चने की विभिन्न व्यावसायिक किस्मों की उपज

स्थान	वर्ष	आरएसजी-515	व्यावसायिक किस्में			
			आरएसजी -931	आरएसजी -888	आरएसजी -973	सीएसजेडी -884
दुर्गापुरा	2009-10	2399	1778	1819	2014	2076
	2010-11	2139	1805	2155	2055	2083
	2011-12	2628	2430	2590	2458	2847
	2012-13	1465	1271	1826	1646	1694
बनस्थली	2009-10	1549	1549	1389	1431	1507
	2010-11	1528	1701	1146	1562	1319
	2011-12	1510	1358	1200	1225	1383
	2012-13	1806	1250	1125	1125	1310
डीग्गी	2010-11	2184	2162	2091	2082	2110
	2011-12	1764	2604	2653	2507	2604
	2012-13	1550	1339	1283	1347	1272
कुम्मेहर	2009-10	1240	833	1018	1064	1111
	2010-11	2673	3194	2152	2430	1909
	2011-12	3111	1500	1600	1618	1784
	2012-13	2245	2352	2384	2338	2370
औसतन उपज प्रति हैक्टर		1986	1808	1762	1793	1825

बुआई का समय

असिंचित दशा में चने की बुआई अक्टूबर के मध्य समय तक कर देनी चाहिए। राजस्थान में चने की सामान्य बुआई का समय 15 अक्टूबर से 15 नवंबर एवं पछेती बुआई 15 नवंबर से दिसंबर प्रथम सप्ताह तक कर सकते हैं।

बीज की मात्रा एवं बुआई

चने की बुआई सिंचित क्षेत्र में 5-7 सें.मी., जबकि असिंचित क्षेत्र में 7-10 सें.मी. गहराई पर 70-80 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सें.मी., जबकि पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. रखनी चाहिए।

उर्वरक प्रबंधन

मृदा स्वास्थ्य कार्ड अथवा मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरक प्रयोग करें। सिफारिश के अभाव में असिंचित क्षेत्रों में 10 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 25 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा सिंचित अथवा अच्छी नमी वाले स्थानों के लिए

भूमि एवं जलवायु

चना आमतौर पर वर्षायुक्त ठंडे मौसम की मृदा या शुष्क जलवायु के अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में फसल के रूप में उगाया जाता है। यह कई दिनों में सर्व प्रकाश अवधि में फूलने वाला पौधा है। इसकी खेती उपयुक्त तापमान 18^0-26^0 सेल्सियस दिन व 21^0-29^0 सेल्सियस रात और 600-1000 मि.मी. वार्षिक वर्षा परिस्थितियों में उचित होती है। आमतौर पर चने की खेती हल्की एवं भारी दोनों प्रकार की मृदा में की जा सकती है, लेकिन भारी काली या लाल मिट्टी (पी-एच 5.5-8.6) पर इसे उगाया जा सकता है। तापमान में उतार-चढ़ाव युक्त ठंडी रातों के साथ 21-41 प्रतिशत की सापेक्ष आर्द्रता बीज बुआई के लिए उपयुक्त होती है। उचित टीकाकरण से रेतीली मिट्टी या भारी मिट्टी में 10-12 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है। भूमि में समुचित जल निकास होना आवश्यक है। इसके लिए मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर लेनी चाहिए। बारानी खेती के लिए गर्मी में गहरी जुताई अवश्य करनी चाहिए ताकि अधिक से अधिक नमी संरक्षित की जा सके। बुआई से पहले तीन-चार जुताई भलीभांति करके 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से 1.5 प्रतिशत क्यूनालफॉस चूर्ण मिट्टी में मिला दें, ताकि उसमें हानिकारक कीट उत्पन्न नहीं हो सकें।

बुआई के समय 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर बीज की गहराई से लगभग 5 सें.मी. गहरी बुआई कर दें। गंधक एवं जस्ते की कमी वाले क्षेत्रों में क्रमशः 125 कि.ग्रा. गंधक एवं 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर बुआई के समय दें।

निराई-गुड़ाई

प्रथम निराई-गुड़ाई, बुआई के 25 से 35 दिनों बाद तथा आवश्यकतानुसार, दूसरी निराई-गुड़ाई 20 दिनों बाद करें। जहां निराई-गुड़ाई संभव नहीं हो, वहां पर सिंचित फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए पेन्डीमिथेलीन 30 ई.सी. अथवा पेन्डीमिथेलीन 38.7 सीएस 750 ग्राम सक्रिय तत्व का शाकनाशी की बुआई के बाद परंतु बीज उगने के पूर्व 600-700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

सिंचाई

सामान्यतः चने की खेती बारानी क्षेत्रों में की जाती है, परंतु जहां सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो वहां मृदा व वर्षा को ध्यान में रखते हुए प्रथम सिंचाई बुआई के 40-45 दिनों एवं द्वितीय सिंचाई, 75-80 दिनों पर अवश्य करें। इस समय सिंचाई करने पर फलियां ज्यादा बनती हैं, जिससे अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। यदि फलियां लगते समय सिंचाई की समुचित व्यवस्था न हो तो 60-65 दिनों पर केवल एक सिंचाई करें। चने में हल्की सिंचाई करें और ध्यान रखें कि खेत में कहीं भी पानी न भरे अन्यथा जड़ ग्रंथियों की क्रियाशीलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसके साथ ही फसल के पीले पड़ने व मरने की आशंका बनी रहती है।

फव्वारा विधि

चने की सिंचाई इस विधि से करने से लगभग 25-30 प्रतिशत पानी की बचत संभव है। पहली सिंचाई, बुआई के लगभग 40 दिनों बाद, दूसरी सिंचाई-बुआई के 80 दिनों बाद (फली बनते समय) तथा तीसरी सिंचाई, बुआई के 110 दिनों पर करें। इसके लिए फव्वारों को लगभग 4 घंटे चलायें।

उपज

उन्नत विधियों का उपयोग करने पर चने की सिंचित क्षेत्रों में औसत उपज 25-28 क्विंटल प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है।

महत्वपूर्ण क्या-जैव ईंधन या खाद्य सुरक्षा

पर्यावरण को स्वच्छ रखने और तेल आयात को कम करने के लिए सरकार द्वारा जैव ईंधन को बढ़ावा दिया जा रहा है इथेनॉल इसका एक बेहतर विकल्प माना गया है। भारत का लक्ष्य 2030 तक इथेनॉल की पेट्रोल में मिलावट को 10 प्रतिशत से बढ़ाकर 20 प्रतिशत तक करने का है। इस लक्ष्य को पाने में कई रुकावटें सामने आ रही हैं जैसे कि जितने जल और भूमि की जरुरत इस कार्य में है उससे देश की खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है।

कुल बोई गई फसल में गन्ने की हिस्सेदारी तीन प्रतिशत होती है, जो कि इथेनॉल के लिए कच्चा माल है। वर्ष 2030 के लक्ष्य को हासिल करने के लिए हमें 10 प्रतिशत जमीन पर गन्ने की खेती करनी होगी। जहां अनुमानित है कि 2030 तक देश की आबादी 1.5 अरब तक पहुंच जाएगी वहीं हमें लक्ष्य प्राप्ति हेतु इथेनॉल का उत्पादन बढ़ाने के लिए खाद्यानों के उत्पादन में कमी करनी होगी। फसलों के अवशेषों से इथेनॉल का उत्पादन किया जा सकता है, जिसके लिए इथेनॉल उत्पादक इकाइयों की क्षमता में वृद्धि आवश्यक है। इस समय हमारी इथेनॉल उत्पादन क्षमता 40 करोड़ लीटर है, जो 5 प्रतिशत मिश्रण के लिए भी पर्याप्त नहीं है।

अमेरिका में 2818 अरब घन मीटर जल प्रतिवर्ष उपलब्ध होता है और ब्राजील में 5661 अरब घन मीटर उपलब्धता होती है। इन दोनों देशों का भौगोलिक विस्तार भी एक कारण है जिसकी वजह से कृषि भूमि की कमी नहीं है। देश में जल की कमी भी जैव ईंधन की उत्पादकता में एक बहुत बड़ी बाधा है। हमारे देश में 1,446 अरब घन मीटर जल प्रतिवर्ष की उपलब्धता है, जबकि 2,750 लीटर जल 1 लीटर इथेनॉल उत्पादन में लगता है। हमें 20 प्रतिशत इथेनॉल मिलाने के लिए 20 खरब लीटर जल की आवश्यकता है।

तेल-ताड़ उत्पादन बढ़ाने की जरूरत

आर. के. माथुर, के. मनोरमा, के. सुरेश और **जी. रविचन्द्रन**
भाकृअनुप-भारतीय तेल-ताड़ अनुसंधान संस्थान, पेदवेगी-534 450 (आंध्र प्रदेश)

" भारतीय आहार में खाद्य तेल की महत्वपूर्ण भूमिका है। खाद्य तेल, ऊर्जा के समृद्ध स्रोत होते हैं और ये अत्यावश्यक वसीय अम्ल के संघटक भी हैं। इसके साथ ही खाने को स्वादिष्ट भी बनाते हैं। लगातार बढ़ रही जनसंख्या, परिवर्तनशील खानपान प्रवृतियों और साथ ही उपभोक्ता की बढ़ती क्रयशक्ति के कारण हमारे देश में खाद्य तेल की मांग में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। मौजूदा आंकड़ों के आधार पर वर्ष 2030 में खाद्य तेल की अनुमानित मांग 34 मिलियन मीट्रिक टन होने की संभावना है। वर्तमान में आयात (लगभग 60-70 प्रतिशत) करके खाद्य तेलों की घरेलू मांग को काफी हद तक पूरा किया जाता है। इस स्थिति में बदलाव लाने की जरुरत है। वर्ष 2030 तक भारत में खाद्य तेल की समस्या का समाधान करने के लिए अनुसंधान जरुरतों, नीतिगत सहयोग तथा अन्य संबंधित मुद्दों पर लेख में प्रकाश डाला गया है। "

भारत, विश्व में वनस्पति तेलों का सबसे बड़ा उपभोक्ता देश है और काफी हद तक खाद्य तेलों के आयात पर निर्भर है। खाद्य तेलों के घरेलू उत्पादन का स्तर मांग की तुलना में बहुत कम है। आयातित खाद्य तेलों में तेल-ताड़ का हिस्सा सबसे अधिक है, जो कि कुल खाद्य तेलों का लगभग 60 प्रतिशत है। इसका मुख्य कारण तेल-ताड़ की उच्च उपज क्षमता और प्रति इकाई क्षेत्रफल तेल उत्पादन की सस्ती दर का होना है। इसके अलावा तेल-ताड़ उत्पादन के अनेक लाभ हैं जैसे (क) यह उच्चतम तेल उत्पादन (अन्य तिलहनी फसलों के मुकाबले 4 गुना अधिक) वाली एक बारहमासी फसल है। इसका आर्थिक जीवनकाल 30 वर्ष तक होता है; (ख) नाशीजीवों व रोगों के प्रति कम संवेदनशील; (ग) खाद्य एवं गैर-खाद्य क्षेत्रों दोनों में अनेक उपयोग हैं, जो कि इसे एक अनूठी फसल बनाते हैं। वर्तमान में भारत में तेल-ताड़ की खेती 0.331 मिलियन हैक्टर कृषि क्षेत्र में की जाती है। यह देश में कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा चिन्हित कुल क्षमताशील कृषि क्षेत्र का केवल 16.3 प्रतिशत ही है। भारत की कुल खाद्य तेल मांग लगभग 25 मिलियन मीट्रिक टन है। इसमें घरेलू उत्पादन का योगदान मात्र 9 मिलियन मीट्रिक टन है। शेष 15-16 मिलियन मीट्रिक टन की पूर्ति आयात के माध्यम से की जाती है। इसका मूल्य लगभग 70-75 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष है। यह भारत के कुल आयात का लगभग 2.5 प्रतिशत है।

तेल-ताड़ की बढ़ती उपयोगिता

इस अंतर को कम करने के लिए 'तिलहन एवं तेल-ताड़ पर राष्ट्रीय मिशन (एनएमओओपी)' के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा देश के सभी राज्यों में वर्ष 2017 के 34 मिलियन मीट्रिक टन के मौजूदा स्तर को वित्त वर्ष 2022 तक 42 मिलियन मीट्रिक टन तक उत्पादन के लिए तिलहन के उत्पादन को बढ़ाने में नीतिगत सहयोग और लक्ष्य की दिशा में तेल-ताड़ की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। इससे देश में कुल खाद्य तेल खपत में आयात को वित्त

वर्ष 2017 में लगभग 60 प्रतिशत से वित्त वर्ष 2022 तक लगभग 55 प्रतिशत तक कम करने में मदद मिल सकती है। बढ़ रही जनसंख्या और उपभोक्ताओं की क्रयशक्ति में बढ़ोतरी के साथ यह अपेक्षा की जाती है कि भविष्य में भारत में खाद्य तेल की मांग बढ़ने की संभावना है। वर्तमान में भारत में प्रति व्यक्ति खपत वर्ष 2017-18 के लिए 18 कि.ग्रा. है, जो कि विश्व में प्रति व्यक्ति खपत (25 कि.ग्रा.) (यूएसडीए 2018) की तुलना में कम है। इसलिए वर्ष 2030 में मांग व आपूर्ति के बीच अंतर के बढ़ने की अधिक आशंका है, जिसे पाटने के लिए और सकेन्द्रित प्रयास करने की जरुरत है।

तेल-ताड़ उपज बढ़ने से तेल आयात खर्च में कमी संभव

वर्ष 1970 के दशक में भारत में व्यावसायिक खेती के रूप में तेल-ताड़ की खेती प्रारंभ की गई थी। वर्ष 1972 से 1984 के दौरान प्रारंभ में दो स्थानों केरल और अंडमान में संगठित तरीके से तेल-ताड़ की खेती को प्रारंभ किया गया। इस फसल के लिए क्षमताशील 11 राज्यों में लगभग 0.79 मिलियन हैक्टर की पहचान करने के बाद सिंचित तेल-ताड़ की संकल्पना विकसित की गई। वर्ष 1990 के दौरान 1000 हैक्टर 'प्रत्येक' की तीन प्रदर्शन इकाइयां स्थापित की गईं। इसके बाद तिलहन और दलहन पर प्रौद्योगिकी मिशन द्वारा तेल-ताड़ विकास परियोजना (ओपीडीपी) को कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा लागू किया गया। वर्ष 2011 में कृषि एवं सहकारिता विभाग, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा डा. रथिनम की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा 18 राज्यों में 1.93 मिलियन हैक्टर क्षमताशील कृषि क्षेत्रों की

तेल-ताड़ + कोको अंत: फसलचक्र

तेल-ताड़ के लाभ

आमतौर पर लोगों का यह मानना है कि तेल-ताड़ स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता। इसमें संतृप्त वसा का अधिक स्तर पाया जाता है। तेल-ताड़ के फलों से दो प्रकार का तेल तैयार किया जाता है : (1) मिसोकॉर्प से कच्चा तेल-ताड़; तथा (2) आंतरिक गुठली से ताड़-गुठली तेल। कच्चे तेल-ताड़ को लाल तेल-ताड़ भी कहा जाता है। यह विटामिन ई (600-1000 पीपीएम; को-एंजाइम क्यू 10 (18-25 मि.ग्रा./कि.ग्रा.) तथा स्टेरॉल्स (325-365 मि.ग्रा./कि.ग्रा.) का समृद्ध स्रोत है। तेल-ताड़ में प्रमुख वसा अम्ल हैं: मेरीस्टिक, पॉमीटिक, स्टीयरिक, ऑलिक तथा लिनोलिक। इसमें अनूठा वसा अम्ल तथा ट्राइग्लाइसिरॉल प्रोफाइल है। यह कई खाद्य अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त बनाता है। यह एक अकेला ऐसा वनस्पति तेल है, जिसमें संतृप्त एवं असंतृप्त वसा अम्लों का 50:50 प्रतिशत संयोजन होता है। कच्चे तेल-ताड़ का इस्तेमाल खाना पकाने, तलने तथा विटामिन स्रोत के रूप में किया जाता है। मिसोकॉर्प से कच्चे तेल-ताड़ का विखंडीकरण करने से मुख्यत: ताड़ ऑलिन (तरल भाग) तथा ताड़ स्टीयरिन (ठोस भाग) उत्पन्न होता है। तेल-ताड़ में संतृप्त पशु वसा और अत्यधिक असंतृप्त वनस्पति तेलों के बीच वाली एक अंतर-मध्यस्थ स्थिति होती है। इसमें पॉली असंतृप्त वसा अम्ल (पीयूएफए), लिनोलिक (10 प्रतिशत) का संतुलित स्तर और पॉमीटिक अम्ल (48 प्रतिशत) तथा ऑलिक अम्ल (38 प्रतिशत) का उच्च स्तर पाया जाता है। उच्च संतृप्त वसा अम्ल मौजूद होने के कारण इसमें खाना तलने के लिए उच्च ऑक्सीकारक स्थिरता और उपयुक्तता पाई जाती है। तेल-ताड़ की बीटा कैराटिन मात्रा विटामिन-ए की कमी को पूरा करने में महत्वपूर्ण होती है। इसमें पेट का कैंसर, मुख का कैंसर, फैरिनगील तथा फेफड़ों के कैंसर जैसे रोगों के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करने की क्षमता होती है। तेल की व्यावसायिक, कार्यपरक, पोषणिक तथा तकनीकी विशेषताओं में सुधार लाने और उनमें संवृद्धि करने के लिए कहीं अधिक असंतृप्त अथवा एकल-असंतृप्त तेलों के साथ तेल-ताड़ को मिलाना एक बेहतर विकल्प है।

पहचान की गई थी। पहचाने गए कुल क्षमताशील क्षेत्र में से मार्च, 2018 तक केवल 16.37 प्रतिशत (0.331 मिलियन हैक्टर) को ही शामिल किया जा सका है (कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग) और राज्यों के बीच केवल गोवा और मिजोरम में संभावित क्षमता का क्रमश: 89, 48 एवं 45 प्रतिशत ही शामिल किया जा सका।

उत्पादकता का वर्तमान स्तर एवं इसमें सुधार की रणनीतियां

पिछले सात वर्षों के दौरान, राष्ट्रीय स्तर पर ताजा फल गुच्छा (एफएफबी) की उपज प्रति हैक्टर 4.31 से 6.12 टन थी (आर्थिकी एवं सांख्यिकी निदेशालय, भारत सरकार), जो कि अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। इस दौरान देश की औसत उपज में लगातार सुधार देखने को मिला है। जब हम विभिन्न राज्यों में औसत उपज पर एक नजर डालते हैं तब हमें पता चलता है कि आंध्र प्रदेश, केरल, तेलंगाना व गोवा ने जहां लगातार बेहतर प्रदर्शन किया है, वहीं अन्य प्रदेश ऐसा नहीं कर सके हैं।

तेल-ताड़ की कम उत्पादकता के कारण संसाधन प्रबंधन

जल एवं पोषक तत्व दो ऐसे महत्वपूर्ण संसाधन हैं, जिन पर तेल-ताड़ जैसी बारहमासी फसल में विशेष ध्यान देने की जरुरत है। पुष्पीय प्राइमोरडियल प्रारंभ होने पर जल दबाव के कारण लिंगानुपात का निर्धारण होता है और इसके कारण ताजा फल गुच्छा उपज प्रभावित होती है। भारत में तेल-ताड़ की खेती अधिकांश सिंचित फसल के रूप में की जाती है। इसकी उच्च वाष्पोत्सर्जन मांग के कारण वर्षभर लगातार सिंचाई करने की जरुरत होती है। महाराष्ट्र में पश्चिमी तटीय क्षेत्र लगभग 5 महीनों के लिए सूखा बना रहता है। आंध्र प्रदेश के नेल्लोर जिले में गर्मी के महीनों में शुष्क हवायें चलती हैं। मिजोरम में शुष्क अवधि नवंबर से मार्च के दौरान बनी रहती है। देश के अनेक भागों में कम भूजल क्षमता के कारण लगातार सिंचाई करना संभव नहीं है।

तेल-ताड़ में उपयुक्त तरीके से पोषक तत्व प्रबंधन करने की जरुरत होती है। अनुचित रूप से प्रयोग करने से इन पोषक तत्वों की कमी हो जाती है और इससे उपज में कमी आती है। विभिन्न राज्यों में प्रचलित सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से भी उपज कम होती है। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा के साथ उर्वरकों का असंतुलित उपयोग करने से अनेक फलोद्यानों में नाइट्रोजन: पोटेशियम असंतुलन देखने को मिलता है। मृदा लवणता के अलावा, बोरॉन, मैग्नीशियम और पोटेशियम की कमी तेल-ताड़ की खेती करने वाले अनेक क्षेत्रों में अत्यधिक प्रचलित है।

जलवायु भिन्नता

तेल-ताड़ फसल का प्रदर्शन उच्चतर आपेक्षिक आर्द्रता के साथ उच्च तापमान (40^0-45^0 सेल्सियस तक) के अंतर्गत बेहतर होता है। न्यूनतम तापमान वाले क्षेत्रों में थोड़ी कम उपज होने की आशंका होती है। अभी भी अधिकांश राज्यों में स्थल की क्षमता वास्तविक उपज से बहुत दूर है। इससे इस दिशा में और सुधार करने की व्यापक संभावनाओं का पता चलता है। पूर्वी भारत के कुछ हिस्सों में 3-4 माह तक उच्च तापमान बना रहता है, जबकि भारत के पूर्वी व उत्तर-पूर्वी हिस्सों में कम तापमान बना रहता है। इसके कारण तेल-ताड़ की वृद्धि व विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कम तापमान बने रहने से फूल निकलने पर प्रभाव पड़ने की आशंका

उच्च उत्पादन हासिल करने की रणनीतियां

तेल-ताड़ की खेती में गर्मियों में प्रतिदिन प्रति ताड़ 215-265 लीटर जल और वर्षाकाल में 160-170 लीटर जल की जरुरत होती है। कुछ उत्पादक इसलिए अधिक मात्रा में सिंचाई करते हैं, क्योंकि उनका मानना है कि सिंचाई के उच्चतर स्तर को अपनाकर उच्च उत्पादन हासिल किया जा सकता है। वास्तव में अत्यधिक सिंचाई करना हानिकारक होता है। इससे जड़ों के सक्रिय क्षेत्र से पोषक तत्वों का रिसाव हो जाता है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली तथा ऑटोमेशन के माध्यम से जल का न्यायोचित प्रबंधन करने पर जल की सटीक मात्रा का उपयोग करने में मदद मिलती है, जिससे काफी मात्रा में जल की बचत की जा सकती है। इस जल मात्रा का उपयोग अन्य फसलों में किया जा सकता है। जैविक अपशिष्ट के साथ ताड़ बेसिन में पलवार बिछाने और ढलान के बीच खाई बनाने जैसी जल संरक्षण तकनीकों का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। पुन: संस्तुत मात्रा से अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करने से खेती की लागत बढ़ती है। इससे मृदा में असंतुलन भी पैदा होता है और निश्चित पोषक तत्वों का अंतर्ग्रहण प्रभावित होता है। मृदा एवं पत्ती पोषक तत्व विश्लेषण पर आधारित पोषक तत्व प्रबंधन करने से उर्वरकों की सटीक अथवा परिशुद्ध मात्रा का उपयोग करने में मदद मिलती है। गोवा, आंध्र प्रदेश, मिजोरम, कर्नाटक, गुजरात एवं तमिलनाडु राज्यों के लिए नैदानिकी एवं संस्तुत एकीकृत प्रणाली (डीआरआईएस) मानक उपलब्ध हैं। वहां सर्वाधिक कमी वाले पोषक तत्वों की भी पहचान की गई। उर्वरीकरण का पुन: प्रयोग करने से उच्च पोषक तत्व उपयोग प्रभावशीलता के साथ उर्वरकों की लगभग 50 प्रतिशत बचत की जा सकी।

डेयरी गायों के साथ तेल-ताड़ का एकीकृत कृषि मॉडल

योजनाबद्ध दृष्टिकोण

एकल फसल के रूप में तेल-ताड़ फसल को उगाना लाभप्रद होता है। हालांकि अंत:स्थल की उपलब्धता तथा साथ ही तेल-ताड़ रोपण में उत्पन्न होने वाले जैविक अपशिष्ट को ध्यान में रखकर तेल-ताड़ के साथ अंतर फसलचक्र को अपनाने पर जोर दिया जाता है। इससे न केवल अधिक लाभ मिलता है वरन् तेल-ताड़ की टिकाऊ खेती को भी बढ़ावा मिलता है। यह अनुमान है कि तेल-ताड़ में अंतर-फसलचक्र को अपनाने से अकेली फसल की तुलना में 191 से 293 प्रतिशत तक लाभ मिलता है। बेहतर लाभ अर्जित करने के लिए डेयरी, पोल्ट्री, भेड़पालन, बकरीपालन जैसे अन्य उद्यमों को तेल-ताड़ के साथ एकीकृत किया जा सकता है, जिससे तेल-ताड़ की खेती के क्षेत्रफल का विस्तार करने में बढ़ावा मिलता है। आंध्र प्रदेश और मैदानी क्षेत्रों के लिए संस्तुत कुछ अंतर-फसलचक्र मॉडल इस प्रकार हैं:

- तेल-ताड़ + केला
- तेल-ताड़+लंबी काली मिर्च+झाड़ीनुमा काली मिर्च
- तेल-ताड़+लाल अदरक+हेलिकोनिया
- तेल-ताड़+लंबी काली मिर्च + कर्तित पत्तियां

इसी प्रकार, केरल और पर्वतीय इलाकों के लिए भी अंतर-फसलचक्र मॉडल विकसित किए गए।

- तेल-ताड़ + कोको/दालचीनी + ग्लाइरीसिडिया पर काली मिर्च
- तेल-ताड़ + *एंथुरियम*/कचोलम
- तेल-ताड़ + कीम्फेरिया गैलान्गल

बनी रहती है, जिससे कि उपज प्रभावित होती है। आंध्र प्रदेश में विभिन्न जिलों में तेल-ताड़ की औसत उपज में व्यापक भिन्नता देखने को मिलती है। आंध्र प्रदेश के नेल्लोर जिले में बहुत कम उपज दर्ज की गई। इसका कारण गर्मी के महीनों में अपर्याप्त सिंचाई और शुष्क पश्चिमी हवाओं का बने रहना था। कुछ गांवों में फार्म के बीच भी औसत उपज में व्यापक भिन्नता पाई गई। इसका कारण प्रबंधन रीतियों का अलग होना है।

अनुसंधान जरुरतें

विभिन्न राज्यों में उत्पादन विवरण से पता चलता है कि कुछ क्षेत्रों के किसान प्रति हैक्टर 30-35 टन ताजा फल गुच्छा तक की उपज हासिल कर सके। संस्तुत प्रौद्योगिकी के साथ कर्नाटक का एक किसान प्रतिवर्ष प्रति हैक्टर 53.2 टन ताजा फल गुच्छे की उपज हासिल करने में सफल रहा। इससे संस्तुत एवं वास्तविक अनुकूलन के बीच व्याप्त व्यापक अंतराल का पता चला। यह एक प्रणालीबद्ध फसल सुधार कार्यक्रम है जिसका स्पष्ट उद्देश्य है : (क) उच्चतर ताजा फल गुच्छा उपज; (ख) बौने एवं गठीले पौधे; (ग) सूखा सहिष्णुता; (घ) स्व पात्रे पुनर्जनन। अभी भी संस्तुत प्रबंधन रीतियों को सही तरीके से अपनाकर मौजूदा बगीचों की उपज को बढ़ाने की व्यापक संभावनाएं हैं।

लवणता, सूखा, उच्च तापमान एवं कम तापमान के बुरे प्रभावों का मुकाबला करने में जलवायु अनुकूल किस्में एवं प्रौद्योगिकियां

एक सिंचित फसल होने के नाते, जलवायु परिवर्तन का तेल-ताड़ फसल पर कहीं अधिक प्रभाव पड़ने की आशंका होती है। इसके अलावा, पूर्वी तटवर्ती क्षेत्रों में 3-4 माह तक अधिक तापमान बने रहने, पूर्वी एवं उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में 2-3 माह तक कम तापमान बने रहने, एक अल्प अवधि के भीतर भारी वर्षा के कारण कुछ निश्चित क्षेत्रों में बाढ़ आने, कुछ क्षेत्रों में कम वर्षा होने तथा देश के पूर्वी भागों में पाला पड़ने की घटना आम बात है। उपरोक्त परिस्थितियों के अनुकूल रोपण सामग्री और प्रौद्योगिकियां विकसित करने की जरुरत है।

प्रभावी संसाधन प्रबंधन तकनीकें

सामान्यतौर पर कृषि उत्पादन में और विशेषकर तेल-ताड़ में जल एक महत्वपूर्ण कारक है, इसलिए जल उपयोग प्रभावशीलता बढ़ाने पर अनुसंधान को उच्चतर प्राथमिकता देने की जरुरत है। प्रति टन ताजा फल गुच्छे की जल आवश्यकता को और कम करने की आवश्यकता है, जिसे वाष्पन, रिसाव और अन्य नुकसान में कमी लाकर पूरा किया जाता है। तेल-ताड़ फलोद्यानों से निकलने वाले अपशिष्ट का यदि पलवार और पुनर्चक्रण के लिए सही तरीके से इस्तेमाल किया जाए तब इससे वाष्पन में कमी लाकर तथा मृदा में पोषक तत्वों को मिलाकर जल उपयोग प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है। इसी प्रकार सटीक कृषि प्रणाली के माध्यम से प्रभावी पोषक तत्व प्रबंधन तकनीकों को तेल-ताड़ बगीचों में उत्पादकता को बढ़ाने के लिए स्थानिक आयाम के साथ स्वाभाविक विविधता पर बल देने की जरुरत है। देश, राज्य, मंडल, गांव और यहां तक कि एक एकल खेत में भी मृदाओं में व्यापक भिन्नता

तेल-ताड़ फल

तेल-ताड़ के फलों के गुच्छे

देखने को मिलती है। उर्वरकों और जल की प्रचलित संस्तुति पोषक तत्व को बेहतर रूप से धारण नहीं करती। इससे कुछ निश्चित पोषक तत्वों की कमी को बल मिलता है, जबकि अन्य में विषाक्तता होती है। जल तथा पोषक तत्वों जैसे महत्वपूर्ण आदानों की परिवर्तनीय दर अनुप्रयोग की तकनीकों को विकसित करने की जरुरत है।

कृषि प्रणाली अनुसंधान

तेल-ताड़ की खेती से अधिक लाभ हासिल करने के लिए कुछ निश्चित मॉडल विकसित किए गए हैं। अभी भी अन्य संयोजनों के साथ मिलकर कार्य करने की व्यापक संभावनाएं हैं। कृषि प्रणाली युक्ति में पोल्ट्री, भेड़पालन, बकरीपालन, पशुपालन और सूअरपालन आदि जैसे संघटकों को विकसित करने की जरुरत है, जिससे तेल-ताड़ की खेती में टिकाऊपन सुनिश्चित होता है।

फार्म यांत्रिकीकरण

तेल-ताड़ में ऊंचे ताड़ वृक्ष से तुड़ाई करना एक बड़ी चुनौती माना जाता है। अंतर फसल के साथ और उसके बिना ऊंचे ताड़ वृक्ष में हार्वेस्टर के विकास कार्य को मजबूती प्रदान करने के लिए अनुसंधान की जरुरत है। वर्तमान में ताजा बायोमास की कटाई करने के लिए मशीनें उपलब्ध हैं। उपलब्ध अपशिष्ट बायोमास के पुनर्चक्रण के लिए उपलब्ध मशीनरी में सुधार करने की जरुरत है।

मूल्यवर्धन

तेल-ताड़ फलोद्यान में ताड़पत्र और नर पुष्पक्रमों के रूप में शुष्क भार आधार पर बायोमास की अधिक मात्रा (प्रतिवर्ष प्रति हैक्टर 15-17 टन) उत्पन्न होती है। तेल-ताड़ की खेती में कुल खेती लागत का लगभग 40 प्रतिशत उर्वरकों पर व्यय होता है। इस अपशिष्ट बायोमास के सही तरीके से पुनर्चक्रण करने पर अधिकांश पोषक तत्वों की जरुरत को पूरा किया जा सकता है। इससे आर्थिक और पारिस्थितिकीय लाभ मिलता है। फलोद्यान अपशिष्ट में उपलब्ध सेलुलोज और हेमीसेलुलोज को यदि अलग किया जाए तो यह किसानों के लिए आमदनी का स्रोत बन सकता है।

संस्थागत सहयोग

खाद्य तेल की लगातार बढ़ रही मांग को पूरा करने के लिए तेल-ताड़ की खेती के अंतर्गत क्षेत्र फसल विस्तार को प्राथमिकता देने की जरुरत है। इसे उत्पाद यथा ताजा फल गुच्छे के लिए एक स्थिर मूल्य क्रियाविधि प्रदान करके हासिल किया जा सकता है। तेल-ताड़ जैसी बारहमासी फसल के लिए, जिसे 25-30 साल तक आर्थिक लाभ के लिए बोया जाता है, मूल्य स्थिरीकरण अत्यधिक अनिवार्य है। ताजा फल गुच्छे की उत्पादन लागत के आधार पर एक स्थिर मूल्य प्रणाली से किसानों अथवा उत्पादकों के बीच विश्वास उत्पन्न होता है। इससे वे तेल-ताड़ फसल के तहत कहीं अधिक क्षेत्रफल में इसका विस्तार करने के प्रति प्रोत्साहित होंगे। स्थिर मूल्य क्रियाविधि के अलावा फसल बीमा योजना का दायरा तेल-ताड़ तक बढ़ाने की जरुरत है। इससे यदि फसल, मौसम प्रतिकूलता अथवा अन्य प्राकृतिक आपदा के कारण प्रभावित होती है, तब किसानों को कुछ राशि मिलने में मदद मिल सकती है। साथ ही तेल-ताड़ फलोद्यानों में कुछ प्रगतिशील किसानों का दौरा कराने की जरुरत है, जो कि संस्तुत रीति पैकेज को अपनाकर अत्यधिक उच्च उपज हासिल कर सकते हैं। ये अन्य किसानों को भी इसी प्रकार की विधियां अपनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

वर्ष 2030 में भारत में खाद्य तेल की अनुमानित मांग लगभग 34 मिलियन टन होने की संभावना है। देश में खाद्य तेल की मांग और घरेलू उत्पादन के बीच व्याप्त अंतर को कम करने में तेल-ताड़ सर्वाधिक व्यावहारिक विकल्प है। तेल-ताड़ के प्रमुख लाभों में इसकी उच्च उपजशील क्षमता; लंबा आर्थिक जीवन; नाशीजीवों व रोगों का अपेक्षाकृत कम प्रकोप; किसानों को लगातार आय; तथा खेती के अंतर्गत अधिक क्षेत्रफल लाने की अच्छी संभावना शामिल है। तेल-ताड़ में लगभग 50 प्रतिशत वसा संतृप्त होती है, अन्य तेलों के साथ मिलने की इसकी योग्यता इसे खाद्य तेल स्रोत का एक अच्छा विकल्प बनाती है। इसकी उच्च संतृप्त वसा अम्ल मात्रा इसे डीप फ्राई के लिए उच्चतर तापमान पर स्थिर (ऑक्सीकारक) बनाती है। वर्तमान में, विभिन्न राज्यों में ताजा फल गुच्छा उपज के स्तर में व्यापक भिन्नता देखने को मिलती है। संस्तुत प्रबंधन रीतियों को अपनाकर उत्पादकता को बढ़ाने के पर्याप्त अवसर मौजूद हैं। अभी तक ताजा फल गुच्छा उत्पादन के मामले में तेल-ताड़ फसल की क्षमता का दोहन पूरी तरह से नहीं किया जा सका है। अधिकांश किसानों के लिए यह अभी भी एक नई फसल है और इसमें जल तथा पोषक तत्वों जैसे संसाधनों का न्यायोचित प्रबंधन करने की जरुरत है। फसल के लंबे जीवनचक्र के कारण, उच्च उपजशील किस्मों और उन्नत प्रौद्योगिकियों का विकास करने के लिए अधिक समय की भी जरुरत है। नि:संदेह बेहतर अनुसंधान एवं विकास सहयोग, किसानों को सहयोग देने के लिए फसल बीमा योजना का बेहतर क्रार्यान्वयन किया जाना जरूरी है। इसके साथ-साथ ताजा फल गुच्छा के लिए स्थिर मूल्य प्रदान करने में भारत सरकार के उचित नीतिगत समर्थन के साथ वर्ष 2030 में खाद्य तेल की मांग में व्यापक रूप से योगदान करते हुए देश में तेल-ताड़ फसल के दिन-दूनी रात चौगुनी विकास होने की संभावना है। ■

अनुपजाऊ बारानी क्षेत्रों के लिए लाभकारी है मेहंदी

मोती लाल मीणा, ऐश्वर्य डूडी और **धीरज सिंह**
भाकृअनुप-काजरी, कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली-मारवार-306401 (राजस्थान)

" मेहंदी जिसे 'हिना' भी कहते हैं, का वानस्पतिक नाम लॉसोनिया इनर्मिस है। यह लाइथिएसी कुल का सदस्य है। मेहंदी को संस्कृत में मेहन्दिका, बंगला में मेहंदी, मराठी में मेंधी और गुजराती में मेंदी के नाम से पुकारा जाता है। यह एक बहुशाखीय, बहुवर्षीय एवं व्यावसायिक फसल है। इसकी पत्तियों का मुख्य तौर पर उत्पादन प्राकृतिक रंग (डाई) तैयार करने के लिए किया जाता है। यह पौधा सम्पूर्ण भारत में बहुतायत में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त यह मिस्र, अफ्रीका, अरब और ईरान आदि देशों में भी मिलता है। यह पौधा ईरान का मूल निवासी है। मेहंदी, राजस्थान की एक महत्वपूर्ण फसल है। राजस्थान के पाली जिले में मेहंदी का उत्पादन सबसे अधिक होता है। अधिकतर किसान इसकी पत्तियों को सूखे पाउडर के रूप में पैकिंग कर निर्यात करते हैं। "

मेहंदी एक झाड़ीदार छोटा वृक्ष है। इसकी शाखाएं कांटेदार, नुकीले पर्ण अभिमुख क्रम में, लंबे, अग्र भाग की ओर कम चौड़े, एवं सरल धार वाले होते हैं। इसके पुष्प हरिताभ श्वेत, गुच्छों में सुगंधित, शाखाग्र फल गोल व कई बीजों वाले होते हैं। एक बार लगाने के बाद कई वर्षों तक इसकी फसल ली जा सकती है। इसकी फसल सितंबर-अक्टूबर तक काट ली जाती है तथा फरवरी से पुनः पौधा स्फुटन करने लगता है।

मेहंदी की सूखी पत्तियों को अलग करना

मेहंदी के पत्तों, छाल, फल और बीजों का उपयोग विभिन्न औषधियों के उत्पादन में किया जाता है। औषधीय रूप से मेहंदी कफ व पित्तनाशक, शोथहर तथा वर्णशोधक होती है। इसके फल निद्राजनक, शोथहर और ज्वरनाशक तथा बीज अतिसार एवं प्रवाहिका होते हैं। पत्तियों और फूलों से तैयार पेस्ट कुष्ठ रोगों में उपयोगी होता है। इसकी पत्तियों का रस, सिरदर्द और पीलिया के निवारण में प्रयोग किया जाता है। मेहंदी में लासोन 2-हाइड्रॉक्सी, 1-4 नाप्थ विनोन, रेजिन, टेनिन गौलिक एसिड, ग्लूकोज, वसा, म्यूसीलेज व क्विनोन आदि तत्व पाये जाते हैं। इसकी खेती कंकरीली, पथरीली और हल्की, भारी सभी तरह की भूमि पर की जा सकती है। यह पौधा गर्म व शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में सरलता से उगता है। बीजों व कलमों द्वारा मेहंदी का प्रवर्धन भी किया जाता है। मार्च-अप्रैल में छायादार स्थान पर तैयार नर्सरी में बीजों को छिड़कना चाहिए। एक हैक्टर भूमि पर छिड़काव करने के लिए 20 कि.ग्रा. बीजों की मात्रा पर्याप्त होती है। 14 से 20 दिनों के अंतराल पर बीजों का अंकुरण होता है। जब पौधे की ऊंचाई 40-50 सें.मी. तक हो तब उन्हें खेत में सीधी लाइनों में 50 सें.मी. की दूरी पर रोपना चाहिए। इस समय खेत की मिट्टी अच्छी तरह गीली होनी चाहिए। मेहंदी की खेती में सिंचाई नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इससे पत्तों के रंजक तत्वों में कमी आ जाती है। रोपण के एक माह बाद खेत में निराई कर अनावश्यक खरपतवारों को बाहर निकाल देना चाहिए। मार्च-अप्रैल में इसकी प्रथम कटाई जमीन से लगभग 2-3 इंच ऊपर से करनी चाहिए।

आगामी वर्षों में प्रतिवर्ष दो कटाई करनी चाहिए, जिनमें से प्रथम कटाई अक्टूबर-नवंबर एवं दूसरी कटाई मार्च में करनी चाहिए। कटाई कर इसे छोटी-छोटी ढेरियों में सुखाकर संग्रहित करना चाहिए। प्रतिवर्ष 15-20 क्विंटल सूखे पत्ते प्रति हैक्टर की दर से प्राप्त होते हैं। मेहंदी एक बहुवर्षीय सूखारोधी झाड़ीनुमा पौधा है। राजस्थान में इसकी खेती पत्तियों में पाये जाने वाले रंग (1 से 2.5 प्रतिशत लासोन) के लिए की जाती है, जो कि केश रंगने और पारंपरिक साज-सज्जा में काम आता है। इसके अलावा फूलों से प्राप्त सुगंधित तेल (इत्र) और पौधे के विभिन्न औषधीय गुण सुप्रसिद्ध हैं। स्त्रियां इसकी पत्तियां पीसकर हाथ-पांव में लाल रंग रंगने के काम में उपयोग करती हैं। इसके पुष्प, हरिताभ-श्वेत, गुच्छों से सुगंधित शाखाग्र खिलते हैं तथा फल गोल एवं कई बीज वाले होते हैं। मेहंदी के पौधे सम्पूर्ण

भारत में पाए जाते हैं। कई जगह इनको खेतों में और बगीचों की मेड़ों पर भी लगाया जाता है तथा फेंसिंग के लिए भी प्रयुक्त किया जाता है। इसके फूलों की अत्यधिक मीठी सुगंध मन को भाती है।

वर्तमान में सोजत की मेहंदी का कई ब्रांड नामों से विपणन हो रहा है। अकेले पाली में लगभग 3,400 महिलाओं और पुरुषों को मेहंदी व्यवसाय द्वारा रोजगार मिल रहा है। 125 से अधिक ब्रांड नामों से बिकने वाली मेहंदी के कारण ही सोजत मंडी का नाम पश्चिमी राजस्थान में मेहंदी मंडी के नाम से प्रसिद्ध है, जहां मेहंदी बेचने के लिए दूर गांवों से आने वाले किसानों के लिए सभी तरह की उचित व्यवस्था है।

जलवायु और भूमि

मेहंदी के पौधे अनेक प्रकार की मृदा व जलवायु में उगाये जा सकते हैं। अच्छी गुणवत्ता की पैदावार के लिए सामान्य बलुई दोमट मृदा एवं उष्ण और शुष्क जलवायु उत्तम है। मेहंदी के पुनर्विकास और अच्छी वृद्धि के लिए तेज धूप, शुष्क वातावरण और गर्मी जरुरी है। यह कम पानी तथा लवणीय व क्षारीय भूमि में भी बड़ी आसानी से वृद्धि करती है। इन्हीं कारणों से पश्चिमी राजस्थान में सीमांत शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र मेहंदी उत्पादन के लिए श्रेष्ठ साबित हुए हैं। इसकी खेती की विधि सरल है और सीमित संसाधनों पर निर्भर करती है।

खेत की तैयारी

यह एक बहुवर्षीय फसल है, जो एक बार लगाने पर वर्षों तक (100 साल) उत्पादन देती रहती है। जिस खेत में मेहंदी लगानी होती है, उस खेत की पहले मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें। इससे भूमि से लगने वाले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। मानसून की पहली बरसात के साथ खेत में 2-3 जुताई कर पाटा लगाकर खेत को तैयार करें।

मेहंदी फसल में कृषि क्रियाएं

पौधरोपण

मेहंदी फसल की शुरुआत पौधरोपण से होती है। एक हैक्टर में पौधरोपण के लिए 1.5 × 10 मीटर की 8-10 क्यारियां तैयार की जाती हैं। क्यारियों में 40-50 सें.मी. गहरी बलुई मिट्टी होनी चाहिए। इसके अलावा 8-10 टन प्रति हैक्टर की दर से सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट डालनी चाहिए। दीमक नियंत्रण के लिए मिथाइल पाराथियॉन 10 प्रतिशत चूर्ण मिलाना चाहिए। मेहंदी का बीज बहुत छोटा होता है, अत: 5-6 कि.ग्रा. बीज उपचारित कर क्यारियों में समान दर से बोना चाहिए। क्यारियों को समतल व उठे स्थान पर बनाना चाहिए, जिससे पानी का निकास आसानी से हो सकता है।

बीज उपचार

बीज को 10-15 दिनों तक लगातार पानी में भिगोकर रखा जाता है। हर दिन ताजे पानी का प्रयोग करते हुए समय की बचत के लिए 3 प्रतिशत नमक के घोल में एक दिन भिगोकर उसके बाद बाकी दिनों साधारण पानी में रखकर धोना चाहिए। इसके पश्चात बीजों को हल्के छायादार स्थान में रखकर सुखाना चाहिए। सुखाने के बाद बीजों को क्यारियों में बोना चाहिए।

मेहंदी फसल कटाई

राजस्थान में मेहंदी

राजस्थान देश में मेहंदी पत्ती का सबसे प्रमुख उत्पादक प्रदेश है। इस प्रदेश के पाली जिलों विशेषकर सोजत और मारवाड़ में मेहंदी मुख्य फसल के रूप में ली जाती है। इसीलिए यह क्षेत्र इसके उत्पादन का प्रमुख व्यापारिक केन्द्र है। जिले की 40,000 हैक्टर क्षेत्रफल में फैली मेहंदी की व्यावसायिक खेती से किसानों, व्यापारियों और इससे जुड़े हुए उद्योगों को प्रतिवर्ष 40 करोड़ रुपये से अधिक की आमदनी होती है। इसी कारण सोजत पूरे विश्व में मेहंदी उत्पादन और विपणन की प्रमुख मंडी है। सोजत क्षेत्र में मेहंदी का पाउडर बनाने तथा मेहंदी की सफाई करने वाले लगभग 50-60 कारखाने लगे हुए हैं। इन कारखानों के मालिक अपना उत्पाद तैयार कर पूरे विश्व के साथ-साथ भारत के दूरदराज के गांवों, कस्बों और शहरों में भी आपूर्ति करते हैं।

बुआई का समय

मेहंदी की बुआई फरवरी-मार्च में करते हैं। पौधों की रोपाई का उचित समय जुलाई-अगस्त रहता है। बुआई के बाद झारे की सहायता से पानी देते रहना चाहिए, जिससे अंकुरण ठीक प्रकार से हो सके।

बुआई की विधि

उपचारित बीज की मात्रा के बराबर रेत मिलाकर बीज को क्यारियों में छिड़ककर बुआई करते हैं। इसके बाद हल्का झाड़ू फेरकर व बारीक सड़ा हुआ गोबर ऊपर से छिड़ककर बीज को ढक दिया जाता है।

सिंचाई

10 से 15 दिनों में बीज का अंकुरण पूरा होने तक प्रतिदिन सिंचाई की आवश्यकता होती है। बाद में हर दूसरे दिन या आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई करते समय ध्यान रहे कि पानी तेज गति से नहीं डालें, जिससे बीज पानी के साथ बह न सके।

निराई-गुड़ाई

बुआई के 20-30 दिनों बाद और समय-समय पर हल्की निराई-गुड़ाई करते हैं। पौधशाला में पौधे 3 से 4 माह की अवधि में 30 से 45 सें.मी. की ऊंचाई प्राप्त कर लेते हैं और खेत में स्थानांतरित करने योग्य

मेहंदी की सूखी पत्तियों की ढेरी

हो जाते हैं। जब जुलाई में मानसून आ जाता है, तब पौधों की दूसरे खेत में रोपाई करनी चाहिए।

रोपाई

रोपाई के लिए खेत में पहले हल, तवेदार (हैरो) और कल्टीवेटर चलाकर मिट्टी भुरभुरी कर ली जाती है। दीमक नियंत्रण के लिए खेत में 25 कि.ग्रा./हैक्टर मिथाइल पाराथियॉन या क्लोरपाइरीफॉस डस्ट का छिड़काव तथा उत्पादकता व जल संग्रहण बढ़ाने के लिए 5 टन/हैक्टर कम्पोस्ट खाद डालनी चाहिए। पौधों की रोपाई जुलाई-अगस्त में बरसात के बाद जल्दी की जाती है। पौधशाला में उपलब्ध पौध (जड़ से उखाड़े पौधे) के अधिकतम तने व जड़ों को काटकर छोटा करके खेत में स्थानांतरित करते हैं। खेत में रोपाई लाईन से लाईन 45 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 सें.मी. की दूरी पर खूंटी से 10-15 मि.मी. गहरा गड्ढा करके की जाती है। क्लोरपाइरीफॉस 35 ई.सी. घोल में जड़ों को गीला करके लगाने से दीमक से अतिरिक्त बचाव होता है। जड़ को सूखने से रोकने के लिए आसपास की मिट्टी को अच्छी तरह दबाना अति महत्वपूर्ण है। रोपण कार्य पूर्ण होने के बाद एक-दो बरसात होना जरुरी है, ताकि रोप खेत में सफलतापूर्वक स्थापित हो सके। रोपे गए पौधों के उचित विकास के लिए 40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर नाइट्रोजन पौधरोपण के समय देनी होती है।

सिंचाई

सामान्यत: मेहंदी की खेती बरसात पर आधारित खरीफ फसल के रूप में लेते हैं। सफल रोपण के बाद दो या तीन अच्छी वर्षा मेहंदी पत्ती उत्पादन के लिए पर्याप्त है। प्रथम वर्ष पौधरोपण के बाद वर्षा नहीं होने पर मेहंदी की सफल स्थापना के लिए एक सिंचाई की आवश्यकता रहती है। इसके उत्पादन बढ़ाने या अत्याधिक सूखे से फसल को बचाने के लिए सिंचाई करना एक वैकल्पिक जरुरत है।

अंतरासस्य व पोषण

खरपतवार नियंत्रण और नमी संरक्षण के लिए निराई-गुड़ाई जरुरी है। प्रथम वर्ष

मेहंदी में लगने वाले कीटों एवं रोगों का प्रंबधन

मेहंदी में लगने वाले कीटों एवं रोगों के उपचार के लिए काजरी संस्थान ने कीट एवं रोगनाशकों, जैव कीटनाशियों एवं जैव नियंत्रण द्वारा काफी सफलता प्राप्त की है, जो निम्न प्रकार है :

रोगनाशी रसायनों द्वारा कीट एवं रोग की रोकथाम

- रासायनिक नियंत्रण बाविस्टिन (1.5 ग्राम/लीटर पानी) + मोनोक्रोटोफॉस (1 मि. ली./लीटर पानी) के घोल का छिड़काव कीट एवं रोग नियंत्रण के लिए अत्याधिक प्रभावी पाये गए। कीट नियंत्रण में 40 प्रतिशत से 2.25 प्रतिशत तथा रोग नियंत्रण 43 प्रतिशत से 8.4 प्रतिशत तक की कमी आंकी गई।
- पाली जिले के सोजत में ट्राइकोडर्मा (1 कि.ग्रा.), वर्मीकम्पोस्ट (40 कि.ग्रा. + फोरेट 20 ग्राम/प्लांट) का उपचार करने पर मेहंदी की फसल उत्पादन में वृद्धि पाई गई। अत: मृदा उपचार व पत्ती उपचार द्वारा मेहंदी की फसल का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

जैविक नियंत्रण

जैव नियंत्रण द्वारा कीटों एवं रोगों की रोकथाम के लिए 1 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा कल्चर को 40 कि.ग्रा., वर्मीकम्पोस्ट या सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर पौधे के चारों ओर डाल दें। फोरेट का उपचार करने से जड़गलन रोग एवं दीमक का प्रकोप नियंत्रित हो जाता है। लट्ट को नियंत्रित करने के लिए प्रतिरोध भी हो जाता है तथा पैदावार दर बढ़ जाती है। खेत में दीमक से छुटकारा पाने के लिए पहले खेत की 2-3 बार जुताई करनी चाहिए। फिर नीम की खली का चूर्ण 50-60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से डालना चाहिए। नर्सरी में समय-समय पर नीम की पत्तियों के घोल का छिड़काव, दीमक के प्रकोप से बचाने के लिए करना चाहिए।

कुदाली से और बाद के वर्षों में हल चलाकर कर सकते हैं। मेहंदी फसल में एक से दो गुड़ाई 30-50 दिनों के अंतराल पर की जाती है। पौधों की उचित बढ़वार के लिए मेहंदी के स्थापित खेतों या बागानों में हर वर्ष प्रथम निराई-गुड़ाई के समय 40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर नाइट्रोजन उर्वरक पौधों की कतारों के दोनों तरफ डालनी चाहिए। अच्छी बरसात की स्थिति में दूसरी निराई-गुड़ाई के समय इसे दोहरायें।

कीट एवं रोग

मेहंदी में मुख्यत: लगने वाले कीट, पत्ती निष्पत्रक (लीफ डिफोलिएटर), सफेद मक्खी (व्हाइट फ्लाई), एफिड, मॉइलासिरस बीटल एवं दीमक हैं। उनमें से पत्ती निष्पत्रक का प्रकोप फसल को बहुत नुकसान पहुंचाता है। इस कीट का लार्वा पत्तियों को अपना भोजन बनाता है तथा बहुत नुकसान पहुंचाता है। इस कीट का संक्रमण मुख्यत: जुलाई से सितंबर के बीच पाया जाता है। इससे लगभग 35-50 प्रतिशत तक नुकसान होता है। राजस्थान में मेहंदी में किसी भयंकर रोग का प्रकोप नहीं पाया जाता है, किन्तु वर्षा के मौसम में ऑल्टरनेरिया नामक कवक पत्तियों में गहरे भूरे रंग के धब्बे बनाते हैं। धीरे-धीरे ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं, जिससे पत्तियां समय से पूर्व गिर जाती हैं। इसके अतिरिक्त मेहंदी की कई वर्षों तक फसल लेने से इसमें मृदा रोग का प्रकोप पाया गया है। यह रोग मेहंदी की जड़ों को ग्रसित करता है, जिसे चारकोल जड़ गलन रोग कहते हैं। इस रोग का जनक राइजोबटोनिया बटाइकोला होता है। ऐसी जड़ें कवक रोग के कारण काले रंग की हो जाती हैं। ग्रीष्म काल में वर्षा न होने तथा अधिक तापमान के कारण मेहंदी के पौधे इस रोग से ग्रस्त होकर सूख जाते हैं।

मेहंदी की खेती के लाभ

- हर घर में उपयोग होने के कारण इसके विपणन में आसानी रहती है, जिससे उत्पादन लागत मिल जाती है
- बहुवर्षीय फसल होने के कारण प्रति वर्ष उत्पादन की निश्चितता तथा बार-बार नई फसल लगाने के झंझट से मुक्ति
- बहुवर्षीय फसल होने के कारण बाढ़, सूखा आदि आपदाओं का विशेष असर नहीं है
- खाली पड़ी भूमि का सदुपयोग।
- मृदा के जल संरक्षण में लाभकारी
- इसके उत्पादन में रासायनिक एवं कीटनाशक दवाओं की आवश्यकता नहीं होती है, जिससे किसानों को कम लागत आती है
- लवणीय और क्षारीय भूमि में भी आसानी से फसल ली जा सकती है
- कम खर्चे में अधिक आय प्राप्त होती है
- मेहंदी के औषधीय गुणों के कारण इसका दोहरा लाभ मिलता है

मेहंदी के उत्पाद तैयार करते श्रमिक

कटाई

मेहंदी की फसल को साल में एक या दो बार काटते हैं। मुख्य फसल मानसून के बाद तेज गर्मी से पत्तियां पकने पर अक्टूबर-नवंबर में काटी जाती है। कटाई का समय उत्पादन की दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। शाखाओं के निचले भाग में पत्तियां पूरी तरह पीली पड़ने पर और स्वत: झड़ने से पहले ही मेहंदी की फसल काट लेनी चाहिए। पत्तियों का आधा उत्पादन पौधों के निचले एक चौथाई भाग से मिलता है। पत्तियों से भरी डालियों/शाखाओं को जमीन के नजदीक से काटकर सूखे खेत या अन्य स्थान पर खुले में सूखने के लिए तीन-चार दिनों तक छोड़ दिया जाता है। सुखाते समय फसल बरसात/पानी से भीगनी नहीं चाहिए। एक भी बौछार कटी हुई मेहंदी की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती है। इसलिए कटाई के समय मौसम साफ और खुला होना आवश्यक है। सूखने के बाद पत्तियों को झाड़कर इकट्ठा किया जाता है और बोरियों में भरकर सूखे स्थान पर भंडारण किया जाता है।

उपज

बारानी फसल से औसतन 1200 से 1600 कि.ग्रा. सूखी पत्ती प्रति हैक्टर प्राप्त होती है। स्थापना के प्रथम तीन वर्ष तक पैदावार कम होती है (500 से 700 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर। मेहंदी बागान सामान्यत: 20 से 30 साल तक उपजाऊ और लाभप्रद रहते हैं।

आर्थिक लाभ

मेहंदी की खेती में मुख्य लागत प्रथम वर्ष लगभग 15,000 रुपये प्रति हैक्टर आती है, जिसमें 15 प्रतिशत खर्च जुताई, 55 प्रतिशत मजदूरी और 30 प्रतिशत पौध खरीदने पर होता है। बाद के वर्षों में इसका आधा व्यय रखरखाव, कटाई और पत्ती झड़ाई इत्यादि पर होता है। मेहंदी की खेती से कुल आमदनी व लाभ सूखी पत्ती की उपज, गुणवत्ता और बाजार (मंडी) में आवक पर निर्भर करती है। मंडी में सूखी पत्ती औसतन 20 रुपये प्रति कि.ग्रा. की दर से बिकती है। एक अनुमान के अनुसार 1500 कि.ग्रा. उपज से लगभग 60,000 रुपये प्रति हैक्टर शुद्ध लाभ होता है। स्थापना के प्रथम तीन वर्षों में इससे कम आर्थिक लाभ मिलता है परंतु बाद में अच्छा उत्पादन व भाव मिलने पर शुद्ध लाभ 2 से 3 गुना बढ़ सकता है। ■

दुधारू पशुओं की प्रजनन समस्याओं का प्रबंधन

दीक्षा पटेल[1] और **के. पोंनुसामी**[2]

“भारत, दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में अग्रणी है। लेकिन भारतीय पशुओं की औसत दूध उत्पादकता विश्व की तुलना में लगभग आधी है। इन पशुओं की कम दूध उत्पादकता मुख्य रूप से उनकी निम्न आनुवंशिक क्षमता, अनुचित प्रजनन प्रबंधन, रोगों, परजीवियों के संक्रमण और असंतुलित आहार के कारण है। डेरी उद्यम की गुणवत्ता, पशु की प्रजनन क्षमता पर टिकी होती है। प्रतिवर्ष एक बछड़ा प्राप्त करना एक डेरी फार्म का लक्ष्य होना चाहिए, ताकि पशुओं से अधिकतम लाभ हो सके। यह लक्ष्य विशेष रूप से मादा पशुओं में प्रजनन संबंधी समस्याओं के कारण बाधित हो जाता है। इसलिए पशुपालकों को प्रजनन संबंधी समस्याओं के प्रबंधन के लिए प्रशिक्षित करना अति आवश्यक है।”

साहीवाल गाय में जेर न गिरने की समस्या

आज के समय में पशुपालन व्यवसाय के सामने कई चुनौतियां हैं। इनमें मादा पशुओं में प्रजनन संबंधी समस्याओं की व्यापकता चिंता का प्रमुख विषय है। क्षेत्रीय स्थिति में अमदकाल और पुनरावृत्ति प्रजनन दो सबसे बड़ी गंभीर प्रजनन समस्याएं हैं, जिससे कुल 30-40 प्रतिशत गाय और भैंसों की संख्या प्रभावित है। इससे सालाना 20-30 लाख टन दुग्ध उत्पादन में कमी आती है और लगभग 50,000 करोड़ रुपये की आर्थिक हानि होती है। क्षेत्रीय परिस्थिति में निम्नलिखित आठ प्रजनन संबंधी समस्याएं होती हैं जिनका पशुओं की प्रजनन क्षमता पर सीधा प्रभाव पड़ता है:

- **पशुओं की यौन परिपक्वता में देरी होना:** भारतीय पशुओं में यौन परिपक्वता और शारीरिक विकास विदेशी पशुओं की तुलना में देरी से होता है। ग्रामीण परिवेश में देखा गया है कि देसी गाय व भैंस 3-4 साल की आयु के बाद भी गाभिन नहीं हो पाती है, जिससे पशुपालक को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।
- **अमदकाल:** इसमें पशु गर्मी में नहीं आता, या फिर मूकमद, जिसमें पशु मदचक्र में तो होता है, पर गर्मी में होने के लक्षण नहीं दिखाता है या फिर पशुपालक उन लक्षणों को पहचान नहीं पाते।
- **पुनरावृत्ति प्रजनन:** इसमें किसी पशु में सामान्य रूप से प्रजनन चक्र चल रहा हो, कोई क्लिनिकल असामान्यता न हो, फिर भी जो तीन या तीन से अधिक बार लगातार गर्भाधान कराने के बाद भी गर्भधारण करने में असमर्थ हो, तो ऐसे पशु को रिपीट ब्रीडर (पुनरावृत्ति प्रजनक) कहते हैं।
- **गर्भपात:** प्रसव के सामान्य समय से पूर्व गर्भस्थ शिशु की मृत्यु हो जाती है और शिशु गर्भावस्था के 45 से 265 दिनों के अंदर पशु के शरीर से मृत अवस्था में बाहर आ जाता है।
- **कठिन प्रसव/डिस्टोकिया:** मादा पशु अपने बच्चे को स्वयं के प्रयासों से प्रसव नहीं करा पाती और प्रसव कराने के लिए कृत्रिम प्रयास की आवश्यकता होती है।
- **रीटेंड प्लेसेंटा या जेर न गिरना:** सामान्य प्रसव के 12 घंटे के बाद भी जेर नहीं गिरता और इसे पशु चिकित्सक की मदद से निकलवाना पड़ता है।
- **गर्भाशय संक्रमण:** प्रसव के दौरान या उसके बाद पशु की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, जिससे अनेक सूक्ष्मजीवों का संक्रमण हो सकता है। यह गर्भाशय संक्रमण नामक रोग पैदा करता है। गर्भाशय संक्रमणों के

[1]वैज्ञानिक, कृषि प्रसार, कृषि विज्ञान केंद्र, बांदा, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उत्तर प्रदेश); [2]प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार विभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

परिणामस्वरूप मैट्रिटिस, एंडोमेट्रैटिस और पयोमेट्रा जैसे रोग होते हैं।

- **गर्भाशय प्रोलेप्स:** इसे आम भाषा में फूल दिखाना, पाक्षा दिखाना या बेल निकलना भी कहते हैं। इसमें गर्भाशय अपने सामान्य स्थान से निकलकर योनि मार्ग से बाहर निकल आता है, या दिखाई देने लगता है। यह प्रसव के तुरंत या कुछ घंटों के अंदर होता है।

इन सभी समस्याओं के कारण पशुपालक को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। इन समस्याओं का मुख्य कारण पशुपालकों के बीच पशुओं के रखरखाव, प्रजनन एवं खानपान की जानकारी का अभाव होना है। इसलिए पशुपालकों को विभिन्न पहलुओं के प्रति जागरुक करना अति आवश्यक है, ताकि वे अपने स्तर पर उक्त समस्याओं का प्रबंधन कर सकें।

दुधारू पशुओं में प्रजनन संबंधी समस्याओं का प्रबंधन

पशुपालक अपने स्तर पर निम्नलिखित उपायों को अपनाकर प्रजनन संबंधी समस्याओं का प्रबंधन कर सकते हैं:

उपयुक्त तकनीक और सही समय का चुनाव

- प्रथम प्रजनन के समय पशु का शारीरिक वजन उनके वयस्क शारीरिक वजन का 60-70 प्रतिशत होना चाहिए।
- सामान्यत: दुधारू पशु प्रत्येक 21वें दिन गर्मी में आते हैं और यह गर्मी 12-24 घंटे तक रहती है। इसलिए पशु को गर्भित करने के लिए उपयुक्त समय गर्मी की मध्य अवस्था है यानी 8-12 घंटे में गर्भाधान करायें। गर्भाधान कराने के लिए पूर्वान्ह-अपरान्ह नियम का इस्तेमाल करें। यदि गाय सुबह गर्मी में आई हो तो उसे शाम और अगर शाम/रात को गर्मी में आई है तो दूसरे दिन सुबह गर्भाधान कराना चाहिए। अधिकांश तौर पर देखा गया है कि गाय के गर्मी में शुरू होने का वक्त और पशुपालक का उसे पहचानने का वक्त अलग-अलग होता है। ऐसे में पशुपालक को चाहिए कि वे तुरंत अपनी गाय का गर्भाधान करा दें। अगर फिर भी गाय गर्मी के लक्षण दिखा रही है तो 12 घंटे के बाद फिर से गर्भाधान करायें।

साहीवाल गाय में कठिन प्रसव की समस्या

- अगर पशुपालक अपने पशु में प्राकृतिक गर्भाधान करवाते हों तो उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि प्रजनक सांड किसी भी संक्रामक रोग से ग्रसित न हो। वह श्रेष्ठ वंशावली का हो और मादा और नर के शारीरिक अनुपात में बहुत ज्यादा भिन्नता न हो। अक्सर देखा गया है कि पशुपालक अपनी अवर्णित नस्ल की गाय को गाभिन कराने के लिए विदेशी नस्ल के सांड का वीर्य इस्तेमाल करते हैं, जिससे गर्भस्थ शिशु आकार में बड़ा हो जाता है और प्रसव के दौरान फंस जाता है। इससे कठिन प्रसव और योनि प्रोलेप्स जैसी समस्याएं पैदा होती हैं, इसलिए नस्ल सुधार के लिए अपनी देसी गाय जैसे गिर, साहीवाल और थारपारकर का इस्तेमाल करें।
- अगर गाय को कहीं बाहर ले जाकर गर्भाधान कराया जा रहा हो तो उसे 10-20 मिनट आराम देने के बाद ही गर्भाधान की प्रक्रिया शुरू करानी चाहिए।
- प्रसव के तुरंत बाद गर्भाधान नहीं कराना चाहिए।

पशुओं में सही समय पर गर्मी का पता लगाना

- पशुपालक को पशुओं में परिपक्वता की आयु का ध्यान रखना चाहिए। संकर गाय 18-24 महीने की उम्र में परिपक्व हो जाती है। देसी गाय और भैंस लगभग 18-30 और 24-36 महीने में क्रमश: परिपक्व होती है। इस उम्र के बाद वह गर्मी में आना शुरू हो जाती है।
- पशुपालक को अपने पशुओं के गर्मी में होने के स्पष्ट लक्षणों की पूरी जानकारी होनी चाहिए ताकि वे सही समय पर गर्मी का पता लगा सकें। पशुओं में गर्मी के लक्षण इस प्रकार हैं:

मादा पशु का अन्य किसी पशु पर चढ़ना या दूसरे पशु विशेषकर सांड को अपने ऊपर चढ़ने देना, बार-बार रंभाना, बेचैनी, आहार कम खाना, दूध उत्पादन में कमी, योनि मार्ग से पारदर्शी, चिपचिपा और गाढ़ा श्लेष्म रिसाव का लटका होना, योनि मार्ग का गुलाबी रंग का या गीला होना, नर पशु या सांड के प्रति आकर्षित होना, दूसरे पशुओं के जननांगों को सूंघना और बार-बार, थोड़ा-थोड़ा मूत्र विसर्जित करना आदि।

- शोध से पता चला है कि अधिकांश पशु (60-70 प्रतिशत) मद में सायं 6 बजे से प्रात: 6 बजे के बीच आते हैं। यह अवधि 12-24 घंटे तक रहती है। इसलिए पशुपालक को अपने फार्म में पशुओं को गर्मी में देखने के लिए समय निर्धारित कर लेना चाहिए, जो पशु गर्मी में आने वाला हो उसकी खास निगरानी करनी चाहिए। कम से कम 24 घंटों में 3 से 4 बार जांच जरूर करनी चाहिए।
- पशु की गर्मी की अनियमितता होने पर पशु चिकित्सक को अवश्य दिखाना चाहिए।

- गर्भाधान के बाद 12 मिनट की ग्रीवा मालिश देने से गर्भधारण की संभावना बढ़ जाती है।
- गर्भाधान के 45-60 दिनों के बाद किसी योग्य पशु चिकित्सक से जांच करानी चाहिए।
- प्रत्येक पशु का प्रजनन रिकॉर्ड ठीक तरह से बनाना चाहिए। जैसे गर्भाधान दिनांक, प्रथम ब्यांत का दिनांक, दो ब्यांत के बीच का अंतराल इत्यादि। इस रिकॉर्ड को समय-समय पर अपडेट भी करें।

पशुओं को उचित मात्रा में आहार और पोषण देना

- बछड़ी/कटड़ी को संतुलित आहार देना चाहिए, जिसमें ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन एवं खनिज लवण भरपूर मात्रा में हों। बछड़ी जिसका वजन 250-300 कि.ग्रा. हो उसे 2-3 कि.ग्रा. दाना, 10 कि.ग्रा. हरा चारा, 2-2.5 कि.ग्रा. सूखा चारा, 50 ग्राम खनिज मिश्रण और 30-50 ग्राम आयोडीनयुक्त नमक प्रतिदिन देना चाहिए। ये सब देने से बछड़ी में यौन परिपक्वता जल्दी आ जाती है और गर्भाधान के लिए जल्दी तैयार हो जाती है।
- शुष्क गाय प्रबंधन भी प्रजनन समस्याओं जैसे जेर न गिरना, कठिन प्रसव और गर्भाशय संक्रमण आदि समस्याओं को रोकने और इसके प्रभावों को कम करने का सबसे अच्छा तरीका है। शुष्क गाय या भैंस जिसका वजन 400 से 500 कि.ग्रा. हो, उसे 2-3 कि.ग्रा. दाना मिश्रण, 25-30 कि.ग्रा. हरा चारा, और 3-4 कि.ग्रा. सूखा चारा प्रतिदिन खिलाना चाहिए। प्रसव के 1 से 2 महीने पहले से पशुओं को दाने के साथ 150-200 ग्राम सरसों या मूंगफली का तेल मिलाकर देने से जेर आसानी से बाहर आ जायेगी।
- गर्भावस्था के दौरान पशु को 1-1.5 कि.ग्रा. अतिरिक्त दाना देना चाहिए। प्रसव की अनुमानित तिथि से ठीक 2-3 महीने पूर्व सुखा कर देना चाहिए। इससे पशु के अगले ब्यांत के लिए तैयार होने में मदद मिलती है और शिशु का विकास भी अच्छी तरीके से होता है।
- आहार में सेलेनियम, फॉस्फोरस, कैल्शियम और विटामिन ए, सी, ई का पूरक देना चाहिए।
- प्रसव के 1 माह पूर्व से अतिरिक्त कैल्शियम देना बंद कर देना चाहिए। ऐसा करने से उच्च दूध उत्पादन वाले पशुओं में दुग्ध ज्वर होने की आशंका कम हो जाती है।
- पशुओं को स्वच्छ और ताजा पानी दिन में कम से कम 2-3 बार पिलाना चाहिए।

ऊपर दिए गए उपायों को अपनाकर पशुपालक अपने दुधारू पशुओं की प्रजनन संबंधी समस्याओं से छुटकारा पा सकते हैं और पशुपालन व्यवसाय को और भी लाभकारी बना सकते हैं। ■

गाय में गर्भाशय प्रोलेप्स

पशुओं के लिए उचित स्वास्थ्य और आवास का महत्व

- पशुशाला की सफाई रोजाना करनी चाहिए।
- पशु के रहने की जगह हवादार होनी चाहिए और पर्याप्त छाया भी होनी चाहिए।
- ट्रांजिशन अवधि यानी प्रसव से 3 सप्ताह पहले और प्रसव के 3 सप्ताह बाद के दौरान गाभिन पशुओं को झुंड से अलग रखना चाहिए।
- प्रसव के दौरान गर्भाशय विभिन्न संक्रमण के प्रति अति संवेदनशील होता है, इसलिए प्रसव हमेशा स्वच्छ स्थान पर ही कराना चाहिए।
- पशुओं को समय-समय पर विभिन्न रोगों के टीके लगवाएं लेकिन गर्भपात से बचने के लिए आखिरी तिमाही में टीकाकरण नहीं करवाना चाहिए।
- पशुपालक को चाहिए कि वे पशुओं में हर 6 महीने में बाह्य परजीवी और अंत:परजीवी के नियंत्रण के लिए पशु चिकित्सक द्वारा सुझाये गए कृमिनाशक जैसे अल्बंडाजोल या इवरमक्टिन का इस्तेमाल करें।
- पशुओं को कुछ समय के लिए स्वच्छंद विचरण के लिए छोड़ देना चाहिए, उन्हें हमेशा बांधकर नहीं रखना चाहिए। इससे कठिन प्रसव और गर्भाशय प्रोलेप्स जैसी समस्या को कम किया जा सकता है।

सोयाबीन है पोषण सुरक्षा का महत्वपूर्ण स्रोत

सत्यप्रिय, प्रेमलता सिंह, चेतना नागर, रवि शंकर और **सत्य प्रकाश**
कृषि प्रसार संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
नई दिल्ली-110012

> “सोयाबीन एक सर्वाधिक पोषक तिलहनी फसल है। इसकी खेती सभी प्रकार की मृदाओं (अति अम्लीय, क्षारीय व रेतीली मृदाओं को छोड़कर) में की जा सकती है। देश का 49.95 प्रतिशत सोयाबीन, मध्य प्रदेश से प्राप्त होता है। इसी कारण से मध्य प्रदेश को सोयाबीन राज्य के नाम से जाना जाता है। सोयाबीन पौष्टिक तत्वों से परिपूर्ण है और स्वास्थ्य संबंधी लाभों के लिए उपयुक्त है। इसमें लगभग 40 प्रतिशत प्रोटीन है, जो दालों में सबसे ज्यादा है। इसमें आहारिक रेशे भी पाये जाते हैं। सोयाबीन से बने खाद्य उत्पादों जैसे सोया दूध, टोफू (सोया पनीर) एवं सोया बड़ी से पोषण सुरक्षा एवं आमदनी को सुनिश्चित किया जा सकता है।”

भारत ने बदलते समय के साथ खाद्य सुरक्षा में अग्रिम स्थान प्राप्त किया है। भोजन का स्वास्थ्य में योगदान प्रत्यक्ष है। यह जरुरी है कि भोजन में सभी पोषक तत्व विभिन्न स्रोतों से लिए जाएं। आज देश में प्रोटीन की कमी की समस्या है। सोयाबीन इस समस्या का एक सार्थक विकल्प है। यह खरीफ की मुख्य तिलहनी फसल है। देश में सोयाबीन उत्पादन 2017-2018 खरीफ में 11.7 मिलियन टन रहा। इस फसल की लोकप्रियता देश के विभिन्न राज्यों में बढ़ती जा रही है। सोयाबीन उत्पादन में मध्य प्रदेश (49.95 प्रतिशत) का प्रथम व महाराष्ट्र (36.28 प्रतिशत) का स्थान द्वितीय है। यह पौष्टिक तत्वों से परिपूर्ण है और स्वास्थ्य संबंधी लाभों के लिए उपयुक्त है। इसमें में 20 प्रतिशत वसा होती है, जिसमें ओमेगा-6 एवं ओमेगा-3 आवश्यक वसीय अम्ल अधिक मात्रा में पाए जाते हैं और ये अम्ल हृदय रोगी के लिए विशेष रूप से उत्तम होते हैं।

खेती के लिए भूमि एवं तैयारी

सोयाबीन की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में (अति अम्लीय क्षारीय व रेतीली मृदाओं को छोड़कर) की जा सकती है। मृदा में अच्छा जल निकास होना चाहिए तथा जैविक कार्बन की मात्रा भी अच्छी होनी चाहिए। पानी के सही निकास वाली चिकनी दोमट मिट्टी सोयाबीन की खेती के लिए अधिक उपयुक्त है। ग्रीष्मकालीन जुताई 3 वर्ष में कम से कम एक बार अवश्य करनी चाहिए। वर्षा प्रारंभ होने पर 2 या 3 बार बखर तथा पाटा चलाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए। इससे हानि पहुंचाने वाले कीटों की सभी अवस्थाएं नष्ट होती हैं। ढेलारहित और भुरभुरी मिट्टी वाले खेत सोयाबीन के लिए उत्तम होते हैं। खेत में पानी भरने से सोयाबीन की फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अत: अधिक उत्पादन के लिए खेत में जल निकास की व्यवस्था करना आवश्यक है। बखरनी एवं पाटा समय से करें, जिससे अंकुरित खरपतवार नष्ट हो सकें। मेड़ और कूंड़ बनाकर सोयाबीन बोएं।

महिलाओं को सोयाबीन उत्पाद बनाने का प्रशिक्षण

सारणी 1. सोयाबीन का पोषक मान (प्रतिः 100 ग्राम)

पानी	8.3 ग्राम	जिंक	5.1 मि.ग्रा.
ऊर्जा	409 किलो कैलोरी	कॉपर	1.9 मि.ग्रा.
ऊर्जा	1691 किलो जूल	मैगनीज	2.64 मि.ग्रा.
प्रोटीन	36.9 ग्राम	सेलेनियम	18.0 मि.ग्रा.
वसा	18.9 ग्राम	विटामिन सी	7.0 मि.ग्रा.
कार्बोहाइड्रेट	31.3 ग्राम	थायमिन (विटामिन $बी_1$)	0.9 मि.ग्रा.
फाइबर	9.6 ग्राम	राइबोफ्लेविन (विटामिन $बी_2$)	0.9 मि.ग्रा.
आइसोफ्लेवंस	200 मि.ग्रा.	नियासिन (विटामिन $बी_3$)	1.7 मि.ग्रा.
कैल्शियम	284 मि.ग्रा.	पैथोटॉनिक अम्ल (विटामिन $बी_5$)	0.8 मि.ग्रा.
आयरन	14.9 मि.ग्रा.	विटामिन $बी_6$	0.4 मि.ग्रा.
मैग्नीशियम	270 मि.ग्रा.	फोलिक अम्ल	380 माइक्रो ग्राम
पोटेशियम	1800 मि.ग्रा.	विटामिन $बी_{12}$	0 माइक्रो ग्राम
फॉस्फोरस	709 मि.ग्रा.	विटामिन।	3.0 माइक्रो ग्राम
सोडियम	3.0 मि.ग्रा.	विटामिन ई	2.0 माइक्रो. ग्राम

बुआई के लिए बीज दर

- छोटे दाने वाली किस्में-70 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर
- मध्यम दाने वाली किस्में-80 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर
- बड़े दाने वाली किस्में-100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

बुआई का समय

जून के अंतिम सप्ताह और जुलाई के प्रथम सप्ताह तक का समय सबसे उपयुक्त है। अच्छे अंकुरण के लिए भूमि में 10 सें.मी. गहराई तक उपयुक्त नमी आवश्यक है। अगर बुआई जुलाई के प्रथम सप्ताह के बाद हो तो बीज दर 5-10 प्रतिशत बढ़ा देनी चाहिए। 4-5 लाख पौधे प्रति हैक्टर पौध संख्या उपयुक्त होते हैं। असीमित बढ़ने वाली किस्मों के लिए 4 लाख एवं सीमित वृद्धि वाली किस्मों के लिए 6 लाख पौधे प्रति हैक्टर होने चाहिए।

बीज अंकुरण परीक्षण

चयनित सोयाबीन की किस्मों के बीज का अंकुरण परीक्षण (न्यूनतम 70 प्रतिशत) कर इसकी गुणवत्ता बोने से पहले से सुनिश्चित कर लेनी चाहिए।

बीजों का उपचार

सोयाबीन के अंकुरण को बीज तथा मृदाजनित रोग प्रभावित करते हैं। इसकी रोकथाम के लिए बीज को थीरम या कैप्टॉन 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम मिश्रण प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। फफूंदनाशक दवाओं से बीज उपचार के बाद बीज को 5 ग्राम राइजोबियम प्रति कि.ग्रा. दर से उपचारित करें। उपचारित बीजों को छाया में रखना चाहिए एवं जल्दी बुआई करनी चाहिए।

बुआई

सोयाबीन की बुआई कतारों में करनी चाहिए। कतारों की दूरी 30 सें.मी. से 45 सें.मी. तक होनी उपयुक्त है। 20 कतारों के बाद कूंड़ जल निथार तथा नमी संरक्षण के लिए खाली छोड़ देना चाहिए। बीज 2

सोयाबीन पोषण एवं उपयोगिता

सोयाबीन पोषक तत्वों से भरपूर एवं पोषण की खान के रूप में जाना जाता है, इसलिए इसे सुनहरे बीन की उपाधि दी गई है। इसमें अधिक मात्रा में प्रोटीन होने के कारण इसका पोषक मान बहुत अधिक होता है। इसमें विटामिन, खनिज तथा विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स और विटामिन 'ई' काफी अधिक मात्रा में होता है, जो शरीर निर्माण के लिए आवश्यक अमीनो अम्ल प्रदान करते हैं। सोयाबीन खाद्य उत्पादों में आइसोफ्लेवंस नामक रसायन होता है, जोकि संरचना में एस्ट्रोजन हार्मोन जैसा होता है। यह महिलाओं को ऑस्टियोपोरोसिस के खतरे से बचा सकता है। इसमें प्रोटीन के अन्य सभी उपलब्ध स्रोतों की तुलना में सबसे अधिक यानी लगभग 40 प्रतिशत अच्छी गुणवत्ता के प्रोटीन एवं 20 प्रतिशत तेल की मात्रा होती है।

सें.मी. से 3.5 सें.मी. गहराई तक बोयें। खाद को पहले खेत में डालकर हल्की मिट्टी में मिला देना चाहिए। खाद और बीज का सीधा संपर्क नहीं रहना चाहिए। इस प्रकिया से अंकुरण क्षमता प्रभावित नहीं होती है।

खरपतवार प्रबंधन

फसल के शुरुआत के 30 से 40 दिनों तक खरपतवार नियंत्रण बहुत आवश्यक है। 15 से 20 दिनों की खड़ी फसल में खरपतवारों को नष्ट करने के लिए क्लुजेलेफोप इथाइल एक लीटर प्रति हैक्टर अथवा इमेजेथाफायर 750 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। मिट्टी में पर्याप्त पानी व भुरभुरापन होना चाहिए।

पौध संरक्षण विधि

कीट नियंत्रण

सोयाबीन की फसल पर बीज एवं छोटे पौधे को नुकसान पहुंचाने वाला ब्लूबीटल (पत्ते खाने वाली इल्लियां), तने को नुकसान पहुंचाने वाली तने की मक्खी एवं गर्डल बीटल आदि का प्रकोप रहता है। कीटों के आक्रमण से 5 से 50 प्रतिशत तक पैदावार में कमी आ सकती है। ऐसे में इन कीटों के नियंत्रण के उपाय इस प्रकार हैं:

कृषिगत नियंत्रण

खेत की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें। मानसून की बारिश के बाद बुआई नहीं करनी चाहिए। खेतों को फसल अवशेषों से मुक्त रखें तथा मेड़ों की सफाई रखें।

रासायनिक नियंत्रण

अंकुरण के प्रारंभ होते ही ब्लूबीटल के नियंत्रण के लिए क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या मिथाइल पेराथियान का 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कई प्रकार की इल्लियां, छोटी फलियों और फलों को खाकर नष्ट कर देती हैं। इन कीटों के नियंत्रण के लिए घुलनशील दवाओं की 700 से 800 लीटर मात्रा पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए। प्रथम छिड़काव 25 से 30 दिनों पर एवं दूसरा छिड़काव 40-45 दिनों की फसल पर करना चाहिए।

जैविक नियंत्रण

कीटों की आरंभिक अवस्था में जैविक कीट नियंत्रण के लिए *बी.टी.* एवं *ब्यूवेरिया बैसियाना* आधारित जैविक कीटनाशक 1 कि.ग्रा. या 1 लीटर प्रति हैक्टर की दर से बुआई के 35 से 40 दिनों तथा 50 से 55 दिनों बाद छिड़काव करें। जैविक कीटनाशकों का उपयोग रासायनिक कीटनाशकों से अधिक उपयोगी है।

कटाई एवं गहाई

फलियों का रंग बदलने पर फसल पकने का अनुमान लगाया जा सकता है। इस अवस्था में सोयाबीन की कटाई करनी चाहिए। कटी हुई फसल की 2-3 दिनों धूप में सुखाकर थ्रेशर से धीमी गति (300-400 आरपीएम) पर गहाई करनी चाहिए। इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि गहाई के समय बीज के छिलके को क्षति न हो।

सोयाबीन में प्रोटीन व आहारिक रेशे पाये जाते हैं। आयरन की मात्रा अधिक होने के कारण यह एनीमिया को भी नियंत्रित करता है। सोयाबीन में पाई जाने वाली प्रोटीन से रक्त में हानिकारक कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को भी कम किया जा सकता है, जिससे हृदय रोग की आशंका कम होती है। इसमें पाये जाने वाले आइसोफ्लोविन रसायन के कारण महिलाओं से संबंधित रोग व स्तन कैंसर से बचाव होता है।

सोयाबीन के उत्पाद

सेहत से भरपूर सोयाबीन स्वाद में भी उत्तम है। सोया को आमतौर पर एक ऐसे तत्व के रूप में जाना जाता है, जिसका प्रयोग कई तरह से किया जाता है जैसे ड्राई रोस्टेड सोयाबीन के स्नैक्स के रूप में, जो फाइबर यानी रेशे का एक अच्छा स्रोत होता है। इसी तरह सोया से तैयार लिक्विड प्रोडक्ट जैसे सोया मिल्क के रूप में इसका इस्तेमाल गाय के दूध की जगह पर किया जाता है। इससे तैयार टोफू कैल्शियम का अच्छे स्रोत है।

सोयाबीन से बनने वाले मुख्य उत्पाद निम्न हैं:

सोयाबीन आटा

सोयाबीन का आटा वसारहित व वसा सहित दोनों प्रकार का होता है। वसा सहित घर पर बनाया जा सकता है तथा वसारहित बाजार से खरीदा जा सकता है। सोयाबीन को साफ करके पानी में कम से कम 20 मिनट तक उबालें। उसके बाद उसको धूप में सुखा लें। सूखने के बाद इसे पिसवा लें। सोयाबीन के तैयार आटे को गेहूं के आटे या बेसन के साथ मिलाकर विभिन्न खाद्य उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। सूखे हुये सोयाबीन को गेहूं या चने के साथ भी पिसवाया जा सकता है। गेहूं तथा सोयाबीन का अनुपात 9:1 का होना चाहिए। सोयाबीन का वसारहित आटा, प्रोटीन का बहुत ही अच्छा स्रोत है। इसमें 50-60 प्रतिशत प्रोटीन

सोया दूध

साफ किए हुये सोयाबीन या सोयाबीन की दाल को भिगोकर 6-8 घंटे के लिए रख दें। उसके बाद 1 भाग सोयाबीन तथा 6 भाग पानी के साथ मिक्सी या ग्राइंडर में पीसें तथा तैयार स्लरी को 10 मिनट के लिए उबालें। उसके बाद मलमल के कपड़े से छान लें और स्वादानुसार चीनी मिलायें। ठंडा होने पर मनपसंद खुशबू मिलायें। इस प्रकार 1 कि.ग्रा. सोयाबीन से लगभग 7 लीटर सोया दूध तैयार हो सकता है।

पूसा संस्थान द्वारा विकसित सोयाबीन की उन्नत किस्में

- **पूसा सोयाबीन-14 (डी.एस. 26-14):** इसकी औसत उपज 20-30 क्विंटल/हैक्टर है। यह एक मध्यम दाने वाली किस्म है, जिसके 100 दानों का वजन 9.93 ग्राम है। दानों में तेल की मात्रा 20-26 प्रतिशत होती है, जो सोयाबीन में अधिक तेल की श्रेणी में आती है। इसकी बीज जीवंतता अवधि लंबी है।
- **पूसा 9712:** इसकी औसत उपज 20.5 क्विंटल/हैक्टर है। यह जल्दी पकने वाली (116 दिनों) किस्म है।
- **पूसा सोयाबीन-12 (डी.एस.12-13):** इसकी औसत उपज 22.9 क्विंटल/हैक्टर है। यह मोटे दाने वाली किस्म है। इसके 100 दानों का वजन 10.53 ग्राम होता है। इसके बीजों की लंबी जीवन्तता अवधि है। दानों में तेल की मात्रा 19.60 प्रतिशत है।
- **पूसा 9814:** इसकी औसत उपज 22.5 क्विंटल/हैक्टर है। यह किस्म पीत मोजेक वायरस, सोयाबीन मोजेक वायरस एवं फली झुलसा की प्रतिरोधी है।

होता है और इसमें बीन की गन्ध भी बहुत कम आती है। इसको आसानी से उपयोग में लाया जा सकता है। गेहूं के आटे में मिलाकर सभी गेहूं के आटे से बनने वाले व्यंजन बनाये जा सकते हैं जैसे-रोटी, डबलरोटी, पूड़ी, पराठा, समोसे आदि। खाद्य पदार्थों में 30 प्रतिशत मिलाने पर भी स्वाद में अंतर नहीं आता है। वसारहित आटे को बेसन के साथ भी मिलाया जा सकता है। बेसन में मिलाने पर खाद्य पदार्थों की पौष्टिक गुणवत्ता बढ़ने के साथ-साथ कीमत भी कम हो जाती है।

सोया पनीर (टोफू)

सोया पनीर सोयाबीन का सर्वोत्तम खाद्य उत्पाद है। यह आसानी से पचता है। *आइसोफ्लेवान* की मात्रा इसमें सर्वाधिक मिलती है। जापान में इसको टोफू कहते हैं। इसको बनाने के लिए साफ सोयाबीन को पानी में 5-6 घंटे भिगो लें। उसके बाद मिक्सी में पानी के साथ 1:9 के अनुपात में पीस लें। उसके बाद प्राप्त घोल को उचित तापमान पर उबाल लें। इससे उबले हुए घोल को मलमल के कपड़े से छान लें। छने हुए दूध को गरम करें तथा 5 मिनट बाद कैल्शियम क्लोराइड के घोल से फाड़ लें। उसके बाद 5 मिनट के लिए बिना हिलाये-डुलाये रख दें। फिर मलमल के कपड़े में दबाकर रखें तथा लगभग 10 मिनट बाद कपड़े से निकालकर टुकड़ों में विभाजित कर दें। इस प्रकार 1 कि.ग्रा. सोयाबीन से लगभग 1.5 से 2 कि.ग्रा. सोया पनीर बनाया जा सकता है। सोया पनीर सेचुरेटेड वसा से रहित होता है तथा दिल के मरीजों के लिए प्रोटीन का कम कीमत पर मिलने वाला स्रोत है।

अंकुरित सोयाबीन का नाश्ता

सोयाबीन 2 भाग तथा 1 भाग चना और 1 भाग मूंग को पानी में भिगोकर 7-8 घंटे के लिए रख लें। इसके लिए तीनों दालों को अलग-अलग कपड़े में बांधकर 6-8 घंटे भिगोकर रखें। जब अंकुरण हो जाये तो साफ पानी से धोकर अंकुरित सोया दालों को हल्की भाप में पका लें। तीनों को मिलाकर हरा धनिया, प्याज, टमाटर, मिर्च तथा नमक व नीबू स्वादानुसार मिलाकर नाश्ते में उपयोग किया जा सकता है।

सोयाबीन पोषण के लिए बहुत ही लाभकारी है। आर्थिक दृष्टि से भी यह एक सफल विकल्प है। इसमें मिलने वाला प्रोटीन एवं कैल्शियम बढ़ते शरीर के लिए महत्वपूर्ण है। इसका नियमित सेवन हमें अच्छे स्वास्थ्य की ओर अग्रसर करता है। गोल्डन बीन के नाम से प्रचलित सोयाबीन पोषण एवं आर्थिक दृष्टि से अपने नाम को सार्थक करता है। सोयाबीन से बने उत्पाद जैसे कि सोयाबीन का दूध और सोया पनीर (टोफू) ग्रामीण महिलाओं के लिए पोषण सुरक्षा के साथ-साथ आर्थिक सशक्तिकरण के लिए भी महत्वपूर्ण हैं।

गंगा नदी में हिलसा मछली को फिर से स्थापित करने का प्रयास

भाकृअनुप-केंद्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर जल संसाधन मंत्रालय, नदी विकास और गंगा संरक्षण के तहत भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण (आईडब्ल्यूएआई), केंद्रीय जल आयोग (सीडब्ल्यूसी), राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन एनएमसीजी) और फरक्का बैराज प्राधिकरण (एफबीए) के सहयोग से गंगा नदी के मध्य हिस्सों जैसे-इलाहाबाद, बनारस, पटना, भागलपुर और फरक्का 2016 से हिलसा मछली को फिर से स्थापित करने में शामिल हो रहे हैं।

हैमिल्टन (1822) ने सबसे पहले कानपुर और आगरा के पास गंगा और यमुना नदी में हिलसा मछली की उपस्थिति दर्ज की थी। यह प्रजाति 1975 के दौरान फरक्का बैराज के निर्माण तक गंगा नदी में उपस्थिति दर्ज कर रही थी। फरक्का बैराज के आयोग बनने के तुरंत बाद, विशेष रूप से फरक्का से इलाहाबाद तक गंगा नदी के मध्य हिस्सों में हिलसा की संख्या में तेजी से गिरावट देखी गई और हाल के वर्षों में यह गिरावट लगभग शून्य तक पहुंच गई।

भाकृअनुप-केंद्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर द्वारा किए गए एक अध्ययन के दौरान, गंगा नदी में हिलसा मत्स्य की फिर से स्थापना के लिए नीति निर्माताओं, सीडब्ल्यूसी, आईडब्ल्यूएआई और एनएमसीजी जैसे महत्वपूर्ण जल हितधारकों ने प्रबंधकों को संस्तुतियां प्रदान की गई हैं। दो महत्वपूर्ण सिफारिशें थीं:

- फरक्का बैराज में उपलब्ध कराए गए दो मछली बांध नियमित रूप से गंगा नदी की हिलसा मत्स्य का कायाकल्प करने के लिए प्रजातियों के धारा के प्रतिकूल प्रवास हेतु मानसून के महीनों के दौरान नियमित रूप से संचालित किए जाने चाहिए।
- हुगली-भगीरथी नदी से हिलसा के प्राकृतिक धारा के प्रतिकूल (अपस्ट्रीम) प्रवास की सुविधा के लिए मौजूदा नौवहन चैनल के पश्चिमी भाग में गंगा नदी के फीडर नहर और नदी के ऊपर एक बाईपास चैनल बनाया जाना चाहिए।

नदी जैव विविधता और हिलसा मत्स्य के महत्व को समझते हुए श्री नितिन गडकरी, केंद्रीय सड़क परिवहन और राजमार्ग, जहाजरानी, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण मंत्री, भारत सरकार की अध्यक्षता में आईडब्ल्यूएआई, सीडब्ल्यूसी, एफबीए भाकृअनुप-सिफरी के प्रतिनिधियों की उपस्थिति में दो उच्च स्तरीय बैठकें आयोजित की गईं। यह निर्णय लिया गया कि भाकृअनुप-सिफरी मछली के मार्ग के उपयुक्त डिजाइन के लिए हिलसा व्यवहार और प्रवासन पैटर्न पर वैज्ञानिक जानकारियां उपलब्ध करवाई जाएंगी।

डा. बी.के. दास, निदेशक, भाकृअनुप- सिफरी और उनकी टीम ने नाविक बांध के माध्यम से गंगा नदी में निर्बाध पलायन के लिए हिलसा पर सभी आवश्यक जैविक जानकारियां प्रदान कीं, जिसे जून 2019 में आईडब्ल्यूएआई द्वारा संचालित किया जाएगा। इसकी घोषणा हाल ही में की गई थी। यह नई नेविगेशनल बांध सुविधा पहली बार हुगली-भगीरथी नदी से गंगा नदी के मुख्य चैनल तक हिलसा के प्रवास में मदद करेगी।

स्रोतः भाकृअनुप-केंद्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर

महिला किसानों के लिए उपयोगी यंत्र

स्वीटी कुमारी, रमेश कुमार साहनी और **आर.आर. पोतदार**
भाकृअनुप-केंद्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश)

" देश के कृषि क्षेत्र में महिला श्रमिकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। खेती के विभिन्न कार्यों में उपयोग में आने वाले उन्नत कृषि औजार एवं यंत्र मुख्यत: पुरुषों को ध्यान में रखकर बनाए गए हैं। पुरुषों की तुलना में महिलाओं की शारीरिक बनावट, संरचना, शिक्षा का स्तर, अनुभव और कौशल अलग-अलग है, जिसके अनुरूप उन्हें अलग तकनीकी की आवश्यकता होती है। पुरुषों के लिए बनाए गए इन यंत्रों के संचालन में महिलाओं को तकनीकी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, जिससे कम उत्पादन के साथ स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। अत: महिलाओं के लिए उपयोगी कुछ हस्तचालित औजारों एवं उपकरणों का विवरण इस लेख में दिया गया है। "

कृषि, आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। देश की लगभग दो-तिहाई से भी अधिक जनसंख्या इस पर निर्भर है। बढ़ती हुई आबादी के लिए भोजन, पशु आहार व रेशों की आपूर्ति में इस क्षेत्र की अहम भूमिका है। इसके अलावा जनसंख्या के एक बड़े हिस्से को इससे रोजगार तथा विविध उद्योगों के लिए कच्चा माल भी प्राप्त होता है। भारत में कृषि तथा संबद्ध गतिविधियों में संलग्न मानव श्रमिक लगभग 263 मिलियन हैं, जिनमें से लगभग 63 प्रतिशत पुरुष श्रमिक तथा 37 प्रतिशत महिला श्रमिक हैं। वर्ष 2020 तक देश में कृषि श्रमिकों की संख्या लगभग 230 मिलियन हो जाएगी, जिसमें से 45 प्रतिशत महिला श्रमिक होंगी। देश में इन महिला कृषि श्रमिकों के लिए कम मशक्कत वाले कृषि उपकरणों का विकास किया जा रहा है। लेख में ऐसे ही कुछ उपकरणों के बारे में बताया गया है।

मेड़ बनाने का उपकरण (हैंड रिजर)

यह उपकरण कृषक महिलाओं द्वारा खेत में सिंचाई के लिए नाली बनाने के लिए, मेड़ पर लगाई जाने वाली सब्जियों, गन्ना रोपाई आदि के लिए फरो तथा मेड़-निर्मित करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यह एक सरल श्रम बचाने वाला उपकरण है, जिसे सिंचित अवस्था में उगाई जाने वाली फसलों में छोटी मेड़ों का निर्माण करने के लिए दो महिलाओं द्वारा चलाया जाता है। इसमें एक हैंडल, मेड़ बनाने का शियर तथा 'टी' प्रकार की खींचने की बीम लगाई गई है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 0.03 हैक्टर/घंटा, शक्ति स्रोत दो महिला तथा अनुमानित कीमत 700 रुपये है।

मेड़ बनाने का उपकरण

हस्तचालित बीज बुआई यंत्र/ड्रिल

इस यंत्र का उपयोग गेहूं, सोयाबीन, मक्का, चना, अरहर आदि के बीजों की कतार में बुआई के लिए किया जाता है। इसमें एक हैंडल, बीज के लिए हॉपर, एक ग्राउंड व्हील (पहिया), एक नलिकाकार रोलर तथा ड्रिल को खींचने के लिए एक हुक लगाया गया है। बीजों की मीटरिंग (मापन) नलिकाकार रोलर की सहायता से की जाती है। बीज बुआई यंत्र को दो श्रमिकों द्वारा चलाया जाता है। एक इसे खींचता है तथा दूसरा इसे सही दिशा व गति से धकेलता है। इस मशीन की क्षमता 430 मीटर^2 प्रति घंटा है। पारंपरिक विधि की तुलना में इसका कार्यनिष्पादन 18 गुना अधिक है। बीज ड्रिल के प्रयोग से पारंपरिक विधि में झुककर प्रचालन मुद्रा से भी छुटकारा मिलता है। इस उपकरण से एक कतार में बुआई की जा सकती है। इससे निराई-गुड़ाई में यांत्रिक साधनों का अधिकाधिक उपयोग करके लागत कम की जा सकती है व कठोर श्रम से भी बचा जा सकता है। इसके साथ ही बीजों की भी बचत होती है। इसका अनुमानित मूल्य 5,000 रुपये है।

हस्तचालित बीज बुआई यंत्र

कोनो वीडर या निराई यंत्र

इसका उपयोग धान की फसल में खेत में कतारों के बीच की खरपतवार को उखाड़कर उसे मिट्टी में मिला देने में किया जाता है। एक लंबे हैंडल (हत्थे) के नीचे दो ट्रंकेटेड रोलर्स को एक के पीछे एक लगाया गया है। कोनाकार रोलर्स में सिरों पर दांतेदार ब्लेड्स लगाए गए हैं। आगे के भाग में एक फ्लोट लगाया गया है, जो इस इकाई को मिट्टी में धंसने से बचाता है। कोनो निराई यंत्र से मिट्टी की ऊपरी सतह को पलटा जा सकता है, जिससे मिट्टी को आवश्यक

कोनो वीडर

हवा मिलती है। इस उपकरण को सीधे खड़े होकर चलाया जाता है। इससे पारंपरिक विधि से आगे झुककर हाथों द्वारा खरपतवार उखाड़ने से छुटकारा मिलता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 120 मीटर^2 प्रति घंटा है। इससे श्रमिकों को कीचड़युक्त खेतों में कठोर श्रम करने से राहत मिलती है। इस यंत्र का मूल्य 1,900 रुपये है।

द्विपहिया निराई यंत्र

कतारों के बीच की खरपतवार उखाड़ने व निराई-गुड़ाई कार्य के लिए यह एक हस्तचालित उन्नत 'हो' निराई यंत्र है। इसमें एक ट्विन व्हील एक 'V' (वी आकार)

द्विपहिया निराई यंत्र

की ब्लेड को U क्लैम्प की सहायता से जोड़ा गया है। खेत में खड़े होकर प्रचालक द्वारा द्विपहिया 'हो' को आगे धकेलकर एवं अपनी ओर खींचकर प्रचालित किया जाता है। इस यंत्र का व्यावसायीकरण किया गया है और इसे किसानों द्वारा प्रयोग किया जा रहा है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 0.015 हैक्टर/घंटा, शक्ति स्रोत एक महिला और अनुमानित कीमत 800 रुपये है।

उन्नत दांतेदार हंसिया (सिकल)

इस यंत्र को भाकृअनुप-केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल द्वारा विकसित किया गया है। इस यंत्र का उपयोग पतले डंठल वाली फसलों जैसे गेहूं, सोयाबीन, धान, चना, सरसों और घास आदि की कटाई करने के लिए किया जाता है। इसमें दांतेदार ब्लेड, सामी और लकड़ी के हैंडल लगे होते हैं। इसका वजन 180 ग्राम है। इसके कम वजन के कारण कलाई पर आने वाली थकान कम होती है। कटाई में शामिल कठिन श्रम को स्थानीय हंसिया, जो कि भारी होता है यानी लगभग 350 ग्राम

उर्वरक छिड़काव यंत्र

इसका प्रयोग खेत में दानेदार उर्वरक के एक समान छिड़काव के लिए किया जाता है। इस यंत्र में एक एजीटेटर दोलक सहित एक हॉपर, फैलाने वाली डिस्क, गियर, हैंडल सहित कैंक, कंधे पर रखने के लिए पैड, रियर पैड पट्टों सहित लगाए गए हैं। इस छिड़काव यंत्र को छाती की ओर सामने रखकर चलाया जाता है। इसे पट्टों की सहायता से पहन लिया जाता है। श्रमिक को इसकी सहायता से उर्वरक का छिड़काव खेत से 2.5 मीटर दूर रहकर करना चाहिए। प्रचालन के दौरान एक बार फेरा लगाने के बाद 5 मीटर की दूरी से पुन: छिड़काव करना चाहिए। उर्वरक की हॉपर में शेष मात्रा पारदर्शी ढक्कन के आरपार देखी जा सकती है ताकि इसे खाली होने पर पुन: भरा जा सके। यह उपकरण 10 से 20 कि.ग्रा. क्षमता में उपलब्ध है। इस उपकरण की सहायता से एक श्रमिक 1.15 हैक्टर प्रति घंटे की दर से खेत में दानेदार उर्वरक का छिड़काव कर सकता है।

उन्नत दांतेदार हंसिया

वजन की तुलना में इसे कम किया गया है। यह अपने एर्गोनोमिकल डिजाइन के कारण श्रमिकों को सुरक्षा भी प्रदान करता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 0-015 हैक्टर प्रति घंटा है और इसका मूल्य 60 रुपये है। फसल के डंठल की कटाई दांतेदार हंसिया के साथ आरी क्रिया के रूप में की जाती है, जो कि स्थानीय सिकल के मामले में खींचने की क्रिया द्वारा किया जाता है। दांतेदार धारियों को बार-बार धार करने की आवश्यकता नहीं होती है, क्योंकि वे आरी क्रिया की कटाई के कारण स्वत: तीक्ष्ण होते हैं।

मूंगफली फली तुड़ाई यंत्र

मूंगफली की फलियों को पौधों से अलग करने के लिए इस यंत्र का प्रयोग किया जाता है। इस फली तुड़ाई यंत्र (स्ट्रिपर) में चौकोर आकार का फ्रेम ऊर्ध्वाधर सहारों पर स्थित है, जिसमें फ्रेम के प्रत्येक ओर क्षैतिज दिशा में कंघी के आकार की धातु पट्टियां लगाई गई हैं। फलियों की तुड़ाई के लिए मूंगफली के पौधों को कंघीनुमा पट्टियों में फंसाकर खींचा जाता है। इस धातु की बनी संरचना पर एक साथ चार महिलाएं कार्य कर सकती हैं। इसकी क्षमता 11 कि.ग्रा. मूंगफली प्रति घंटा प्रति महिला है। पारंपरिक फलियों की तुड़ाई में 200 कि.ग्रा. की तुलना में इस यंत्र के उपयोग से उच्च कार्यनिष्पादन क्षमता 350 कि.ग्रा. फलियां प्रतिदिन प्राप्त की जा सकती हैं। इसके उपयोग से पैर मोड़कर बैठने वाली मुद्रा से भी छुटकारा मिलता है, जिससे घुटनों पर दबाव कम पड़ता है। पारंपरिक प्रक्रिया की तुलना में मूंगफली फली तुड़ाई

मूंगफली फली तुड़ाई यंत्र

यंत्र (स्ट्रिपर) में श्रमिकों के प्रति इकाई हृदय दबाव में लगभग 79 प्रतिशत की कमी हुई। स्ट्रिपर यंत्र का अनुमानित मूल्य 2,500 रुपये है।

मूंगफली फोड़क यंत्र (खड़े होकर चलाने वाला)

यह ग्रामीण महिलाओं के लिए बनाया गया एक हस्तचालित उपकरण है, जो फली से दाने को अलग करता है। इस उपकरण

नवीन रोपछिद्रक (डिबलर)

यह खेत में बड़े या मध्यम बीजों की बुआई करने या अंतर को पूरा करने के लिये हस्तचालित उपकरण है। नवीन डिबलर का उपयोग कम क्षेत्र में बड़े या महंगे/दुर्लभ बीजों के लिए किया जाता है। यह छोटे खेतों अथवा पहाड़ी क्षेत्रों में सोयाबीन, ज्वार, चना तथा मक्के की बुआई के लिये उपयुक्त हैं। इस डिबलर में जबड़े के प्रकार के बीज प्लेसमेंट डिवाइस, सेल प्रकार के मीटरिंग तंत्र, रोलर और जबड़े के लिए लीवर टाइप पॉवर ट्रांसमिशन सिस्टम और डिलीवरी सिस्टम के साथ बीज बॉक्स होते हैं। खेत में बोए जाने वाले बीज को भरने के बाद कार्यकर्ता को वांछित स्थान पर डिबलर रखना चाहिए। जबड़े को खोलने के लिए लीवर (डिबलर के सामने) को धीरे से धक्का देना चाहिए। ताकि बीज गिर जाए। इस यंत्र की कार्य क्षमता 150 मीटर^2 प्रति घंटा है। यह झुकने वाले आसन से भी बचाता है, जिसे आमतौर पर पारंपरिक पद्धति में अपनाया जाता है। लाइन बुआई इन उपकरणों के साथ की जाती है, जो यांत्रिक खरपतवारों के उपयोग को बढ़ावा देते हैं। इससे खरपतवार के नियंत्रण की लागत में कमी आती है। बीज की भी बचत होती है। इसकी लागत 700 रुपये है।

मूंगफली फोड़क यंत्र

को खड़े होकर आसानी से महिलाओं द्वारा प्रचालित किया जाता है। इस इकाई में एक फ्रेम, हैंडल तथा इधर-उधर हिलने वाली छलनी होती है, जिसमें आयताकार छेद होता है। एक बार में 2 कि.ग्रा. फली फोड़ने के लिए इसमें डाली जाती है, जिसे अवतल तथा दोलन करने वाली लोहे/नायलॉन शू लगी हुई थ्रेड के बीच फोड़ा जाता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 40 कि.ग्रा./घंटा, शक्ति स्रोत एक महिला और अनुमानित कीमत 2,400 रुपये है।

नलिकाकार मक्का शेलर यंत्र

यह हाथ से चलाया जाने वाला औजार है, जिससे छीले गए भुट्टों से मक्के के दाने निकाले जा सकते हैं। इस इकाई में कलईयुक्त पाईप की अंदरूनी परिधि में चार टेपर्ड फिन्स लगाए गए हैं। इकाई को बायें हाथ तथा भुट्टे को दायें हाथ में पकड़कर इकाई में डालकर घुमाया जाता है, जिससे दाने अलग किए जा सकते हैं। यह इकाई अष्टकोणीय डिजाइन में उपलब्ध है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 20-25 कि.ग्रा./घंटा, शक्ति स्रोत एक महिला और अनुमानित कीमत 60 रुपये है।

नलिकाकार मक्का शेलर यंत्र

घूमने वाला छिलाई यंत्र (रोटरी मक्का शेलर यंत्र)

यह छीले गए मक्के के भुट्टों से दाने अलग करने के लिए उपयोगी यंत्र है तथा

मूंगफली फोड़क यंत्र (रोटरी)

व्यावसायिक तौर पर प्रयोग किया जाता है। इसे हाथ से प्रचालित किया जाता है। इसमें एक ढांचा, एक फ्लाई व्हील, एक हॉपर तथा तीन छिलाई (रोलिंग) गियर लगाए गए हैं।

मूंगफली फोड़क यंत्र (बैठकर चलाने वाला)

यह ग्रामीण महिलाओं के लिए बनाया गया एक हस्तचालित उपकरण है, जो फली से दाने को फोड़कर अलग करता है। इस उपकरण को चौकी पर बैठकर

आसानी से महिलाओं द्वारा प्रचालित किया जाता है। इस इकाई में एक फ्रेम, हैंडल तथा इधर-उधर हिलने वाली छलनी होती है, जिसमें आयताकार छेद होता है। एक बार में 1.5 कि.ग्रा. फली फोड़ने के लिए इसमें डाली जाती है। इसे अवतल तथा दोलन करने वाली लोहे/नायलॉन शू लगी हुई थ्रेड के बीच फोड़ा जाता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 30-35 कि.ग्रा./घंटा, शक्ति स्रोत एक महिला और अनुमानित कीमत 2,400 रुपये है।

प्रचालक एक हाथ से भुट्टे मशीन में भरता है तथा दूसरे हाथ से उपकरण को प्रचालित करता है। छीले गए भुट्टे दूसरी ओर सिरे से बाहर निकल आते हैं। इस उपकरण की क्षमता 73 कि.ग्रा. प्रति घंटा है। पारंपरिक प्रक्रिया की तुलना में घूमने वाले इस छिलाई यंत्र के प्रयोग से हृदय दबाव में 32 प्रतिशत का फर्क पड़ा। इसमें प्रचालक की उंगलियों को किसी प्रकार की चोट लगने की आशंका नहीं रहती है। अत: यह श्रमिकों के लिए सुरक्षित है। इसका अनुमानित मूल्य 6,000 रुपये है।

पैडलचालित धान थ्रेशर

इस यंत्र का उपयोग धान थ्रेशिंग में किया जाता है। इस थ्रेशर में एक सिलेंडर लकड़ी/एल्यूमीनियम स्ट्रिप्स के साथ होता

पैडलचालित धान थ्रेशर

है। इस थ्रेशर में वायर लूप बनाकर उन्हें इन पट्टियों पर जड़ा/वेल्ड करके जोड़ा गया है। पैर के पैडल से सिलेण्डर को शक्ति संचरण प्रणाली (पॉवर ट्रांसमिशन सिस्टम) के माध्यम से एक रोटरी गति दी जाती है। धान के बंडलों को इस घूमते हुए सिलेंडर पर पकड़कर रखा जाता है, जिससे धान की थ्रेशिंग होती है। इसकी क्षमता 35 कि.ग्रा. प्रति घंटा है। इससे धान की थ्रेशिंग के दौरान झुककर कार्य करने की आवश्यकता नहीं होती, जिससे कठोर श्रम में कमी देखी गई। साथ ही हाथों को कंधों से ऊपर देर तक उठाकर नहीं रखना पड़ता है, जैसा कि पारंपरिक विधि में अर्थात चबूतरे या पत्थर पर धान के बंडल को बार-बार पटका जाता है। इसका अनुमानित मूल्य 5,500 रुपये है।

पैडलचालित अनाज सफाई यंत्र

इस मशीन का उपयोग अनाजों की सफाई व श्रेणीकरण के लिए किया जाता है। इस मशीन के स्क्रीन एवं वायु ब्लोअर की गति को समायोजित करके बहुउपयोगी बनाया जा सकता है। इसकी कार्य क्षमता 330 से 880 कि.ग्रा. प्रति घंटा है। इसमें 0.5 अश्वशक्ति की एकल फेज विद्युत मोटर एवं एक प्रचालक की आवश्यकता पड़ती है।

हस्तचालित द्विछलनी अनाज सफाई यंत्र

यह थ्रेशिंग के बाद ठूंठ, भूसी और मिट्टी आदि जैसी अशुद्धियों को गेहूं, चना, सोयाबीन तथा अन्य अनाजों और दलहनी फसलों से अलग करता है। यह एक बैंच प्रकार का उपकरण है जिसमें सफाई के लिए अनाज को एक निश्चित मात्रा में डाला जाता है। यह इकाई वर्तमान में अनाज साफ करने की पारंपरिक प्रक्रिया जैसे हवा या क्षैतिज/ऊर्ध्वाधर छलनियों को प्रतिस्थापित करने के लिए बनाई गयी है। इसमें एक मुख्य ढांचा, ऊपरी अनाज सफाई तथा निचली अनाज श्रेणीकरण छलनियां, ड्रेपर रॉड, हत्था शटर आदि लगाए गए हैं। इसे चार रस्सियों के साथ किसी ऊंचे स्थान पर बांधकर प्रचालित किया जाता है। इस बात का ध्यान रखें कि इसका हैंडल कमर की ऊंचाई के बराबर रहे। इस इकाई में 5-10 कि.ग्रा. अनाज भरकर इकाई को हाथ से आगे-पीछे हिलाकर अनाज साफ किया जाता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 150-225 कि.ग्रा. प्रति घंटा (गेहूं-150, चना-200, सोयाबीन-225), शक्ति स्रोत एक महिला और अनुमानित कीमत 4,500 रुपये एवं बोरा लटकाने की चौखट की कीमत 1,200 रुपये है।

पैडलचालित अनाज सफाई यंत्र

चक्रीय रोपछिद्रक (रोटरी डिबलर)

यह यंत्र मक्का, सोयाबीन, ज्वार,

चक्रीय रोपछिद्रक (रोटरी डिबलर)

अरहर, चने जैसे बोल्ड बीजों की काली मिट्टी वाले क्षेत्र में बुआई के लिए उपयुक्त है। यह एक हस्तचालित धकेलकर चलाया जाने वाला उपकरण है। इससे अच्छी तरह तैयार किए गए खेत में बड़े तथा मध्यम आकार के बीजों की बुआई कतारों में नियमित दूरी पर की जाती है। इसमें बीज हॉपर, बीज निकास जॉ, जॉ प्रचालन लीवर, लकड़ी का रोलर, हत्था, परिवहन तथा मिट्टी दबाने वाला पहिया आदि लगाए गए हैं। इस यंत्र की कार्य क्षमता 500 मीटर^2 प्रति घंटा है। इसकी लागत 2,300 रुपये है।

बीज उपचार ड्रम

इस यंत्र का उपयोग बीजों की बुआई से पहले बीजों को विभिन्न प्रकार के पाउडर/

बीज उपचार ड्रम

रसायन के साथ एक सामान रूप से मिलाने के लिए किया जाता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 200 कि.ग्रा. प्रति घंटा है। इसका मूल्य 2,200 रुपये है। ■

सजावटी मछलियों के पालन में आहार प्रबंधन

मनोज कुमार, कृष्णा कुमार चौधरी और **बी.आर. होन्नानंदा**
जलीय कृषि विभाग, मात्स्यिकी महाविद्यालय, छत्तीसगढ़,
कामधेनु विश्वविद्यालय, कवर्धा-471995 (छत्तीसगढ़)

" मछलियों को पोषक आहार देने का उद्देश्य, उनके सर्वोत्तम विकास और बेहतर स्वास्थ्य के लिए पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करना है, ताकि मुनाफा बढ़ाया जा सके। प्राकृतिक जल में मछलियों की विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक खाद्य पदार्थों तक पहुंच होती है, लेकिन उनका समग्र स्वास्थ्य उनके पसंदीदा भोजन की उपलब्धता पर निर्भर करता है। एक सीमित प्रणाली में प्राकृतिक या जीवित आहार की सीमित उपलब्धता के कारण पौष्टिक रूप से संतुलित पूरक आहार अनिवार्य है। आमतौर पर सजावटी मछलियों को विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक पैलेटेड चारा खिलाये जाते हैं, जो बाजार में उपलब्ध होते हैं। ये आहार सिंगापुर, हांगकांग, कोरिया, थाईलैंड और कई अन्य देशों से आयात किए जाते हैं। इन मत्स्य आहारों की उच्च लागत मत्स्यपालकों के स्तर पर उनके व्यावसायिक पैमाने को प्रभावित करती है। इसके अलावा, एक तालाब में खाद्य मछली को खिलाने की तुलना में, छोटी पालन इकाइयों में सजावटी मछली को खिलाने के लिए अधिक सटीकता की आवश्यकता होती है। इसलिए एक सजावटी मछली उत्पादक को मछलियों की पौष्टिक आवश्यकताओं, आहार-व्यवहार और विभिन्न प्रजातियों की फीडिंग हैबिट्स के बारे में तकनीकी जानकारी होनी चाहिए, जिससे वे स्थानीय रूप से उपलब्ध लागत और प्रभावी गुणवत्ता सामग्री का उपयोग करके अपने फार्म पर ही चारा उत्पादन कर सकें। "

सजावटी मछलियों को परंपरागत रूप से पारंपरिक आहार और जीवित आहार (प्रकृति में उपलब्ध) खिलाया जाता है, जो इनकी पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता है। इसके अलावा दिए गए आहार की मात्रा और गुणवत्ता आवश्यकता के अनुसार नहीं होती है। मछली चारा प्रबंधन में सही आहार विधि का उपयोग करके सही चारा चुनना और चारा एवं पालने की लागत को अनुकूलित करना शामिल है, ताकि उद्यम लाभदायक हो सके।

आहार के प्रकार

सजावटी मछलियों के लिए प्रयुक्त, तैयार आहार मुख्य रूप से नमी के आधार पर दो प्रकार के होते हैं:

- शुष्क आहार
- गैर-शुष्क (नम/गीले) आहार

शुष्क आहार: ये सूखे अवयवों से बने होते हैं और इनमें नमी की मात्रा 6-10 प्रतिशत के बीच रहती है। शुष्क आहार के विभिन्न निम्न रूप हैं:

- **मैश आहार:** यह शुष्क सामग्री का एक साधारण मिश्रण होता है और छोटे आकार की मछली (लार्वा/फ्राई) के लिए उपयोग किया जा सकता है।
- **पैलेटेड आहार:** यह एक प्रकार का सूखा आहार होता है, जिसे यांत्रिक माध्यमों द्वारा आवश्यकतानुसार आकार में संकलित किया जाता है। इसका

एक्वेरियम में सजावटी मछलियां

सारणी 1. मछली की विभिन्न अवस्थाओं में पोषक तत्वों की आवश्यकता (प्रतिशत में)

पोषक तत्व	युवा अवस्था	ब्रूड स्टॉक*	स्रोत
प्रोटीन	40-50	30-40	मछली, स्क्विड, झींगा, सोयाबीन, सरसों, मूंगफली आदि का पिसान, गेहूं/मक्का का लस, क्लैम का मांस
लिपिड	4-6	6-8	मछली का तेल, वनस्पति तेल (सूरजमुखी, अलसी आदि)
कार्बोहाइड्रेट	40-50	40-45	मक्के का आटा, चावल और गेहूं की भूसी
विटामिन-खनिज	1-2	1-2	कृत्रिम रूप

*ब्रूड स्टॉक (अंडा देने वाले और बच्चा देने वाले दोनों) को लाइव आहार भी दिया जाना चाहिए।

ज्यादा और कम फीडिंग रोकें

उच्च उत्पादन और अच्छे फायदे के लिए पूरक आहार का उपयोग बहुत आवश्यक है। यह उत्पादन की लागत को बढ़ाता है इसलिए इसका विवेकपूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए। ज्यादा फीडिंग कराने से इनपुट की लागत बढ़ जाती है और पानी की गुणवत्ता भी बिगड़ जाती है। यह बहुत ही सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि मछलियां कम फीडिंग से नहीं मर सकतीं। कम फीडिंग भी उचित नहीं है, क्योंकि इसके कारण मछलियों की वृद्धि रुक जाती है।

लाइव आहार

लाइव आहार को 'जीवित पौष्टिक कैप्सूल' भी कहा जाता है। इसमें सभी आवश्यक पोषक तत्व (प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा) तथा सूक्ष्म पोषक तत्व (विटामिन और खनिज) होते हैं। लाइव आहार मछलियों में रंग विकास के लिए वर्णक प्रदान करने के अलावा मछलियों के अस्तित्व, विकास और प्रजनन दक्षता को भी बढ़ाने का कार्य करते हैं। लाइव आहार कई प्रकार के जल निकायों में बहुतायत में उपलब्ध होते हैं, लेकिन इन्हें इकट्ठा करना बहुत मुश्किल होता है। दूसरा प्राकृतिक परिस्थितियों में उपलब्ध चारे की गुणवत्ता भी अनिश्चित होती है। ये रोग संचरण के एक संभावित स्रोत भी हो सकते हैं, इसलिए जीवित खाद्य पालन इकाई को सजावटी मछली उत्पादन इकाई में एक अभिन्न अंग के रूप में शामिल करने की आवश्यकता होती है।

उत्पादन छोटे फर्मों में हाथ से संचालित या इलेक्ट्रिक, पेलेट्स बनाने की मशीन का उपयोग कर किया जा सकता है, जबकि बड़े फर्मों में आहार मिल स्थापित की जा सकती है।

- **पपड़ी आहारः** यह संरचना में चपटा होता है। यह पहले सतह पर तैरता है और फिर धीरे-धीरे डूब जाता है। यह आदर्श रूप से शीर्ष में निवास करने वाली मछली और मध्य-पानी की मछली के लिए अनुकूल है। कई नीचे रहने वाली प्रजातियां भी पपड़ी आहार नीचे गिरने के बाद उसका उपभोग करती हैं।

सारणी 2. जीवित चारे का आकार और पसंदीदा अवस्था

सूक्ष्मजीवों का नाम/लाइव आहार	आकार	उपयोग की अवस्था	महत्वपूर्ण लक्षण
इन्फोसोरिया	50-300 माइक्रो मी. (0.05-0.3 मि.मी.)	पहला इंस्टार चरण (ताजा अंडे से निकला हुआ)	छोटे और एककोशिकीय, लार्वा के लिए आदर्श स्टार्टर आहार
जूप्लैंकटन	200-3000 माइक्रॉन (0.2-3.0 मि.मी.)	लार्वा चरण	प्रारंभिक जीवन चरणों के लिए उच्चतम प्रोटीन (60-65 प्रतिशत) स्रोत
आर्टेमिया नॉपली	400-500 माइक्रॉन	लार्वा चरण	फिल्टर आहार के लिए उपयोगी, पूफा (पीयूएफए), विटामिन-सी युक्त, 6-8 घंटे तक हैचिंग के बाद और मछली के लार्वा को दिए जाते हैं
काईरोनोमिड लार्वा (ब्लड वर्म)	10-20 मि.मी.	लार्वा चरण	आयरन और पिग्मेंट का समृद्ध स्रोत (हीमोग्लोबिन युक्त)
ट्यूबिफेक्स वर्म (स्लज वर्म)	20 मि.मी. तक लंबा	फ्राई	आयरन और पिग्मेंट का समृद्ध स्रोत (हीमोग्लोबिन युक्त)
केंचुआ	आकार प्रजातियों के अनुसार बदलता रहता है	वयस्क (कटे हुए रूप में)	प्रोटीन (60-65 प्रतिशत) और वसा (9-10 प्रतिशत) के प्रचुर स्रोत और ब्रूडस्टॉक एवं ग्रो आउट कल्चर के लिए उपयोगी

आहार अथवा ऊर्जा स्रोत

सारणी 3. विभिन्न विकासात्मक चरणों के लिए आहार की अनुमानित मात्रा

अवधि	कुल बायोमास (1000 नग)	फीडिंग दर*	आहार की मात्रा
1 से 4 सप्ताह	1.5 ग्राम	मछली शरीर के वजन का 4-6 गुना	6.0-9.0 ग्राम प्रतिदिन
फ्राई	100 ग्राम	मछली शरीर की वजन 5-10 प्रतिशत	5-10 ग्राम प्रतिदिन
फिंगरलिंग	1000 ग्राम	मछली शरीर की वजन 3-5 प्रतिशत	30-50 ग्राम प्रतिदिन
ग्रो आउट	10000 ग्राम	मछली शरीर की वजन 2-3 प्रतिशत	200-300 ग्राम प्रतिदिन

*बेहतर विकास और उन्नति के लिए सह-भोजन (प्राकृतिक/जीवित भोजन) देना भी आवश्यक

सारणी 4. सजावटी मछली को आहार खिलाने की आवृत्ति

मछली की उम्र	आहार खिलाने की आवृत्ति	टिप्पणी
1 से 4 सप्ताह	एक दिन में 3-4 बार	मछली विकास एवं रंग में वृद्धि के लिए वैकल्पिक आहार (सूखे/ जीवित आहार) खिलाना आवश्यक
3 महीने तक	दिन में तीन बार	-
4 महीने बाद		
(बड़े होने के लिए और ब्रूडर्स के लिए)	दिन में दो बार	-

महत्वपूर्ण सुझाव

- जिस सजावटी मछली की प्रजाति का आप पालन करना चाहते हैं, उसके पोषण की आवश्यकता को समझना।
- मछली के आहार और उसके खाने की आदत/उसके निवास के बारे में पता लगाएं।
- ऐसे आहार का चयन करें, जो मछली के निवास स्थान तक पहुंचने में उपयुक्त हो।
- आहार फॉर्मुलेशन के लिए सही मछली आहार सामग्री का चयन करें।
- तैयार आहार की पोषक सामग्री के बारे में जानकारी पढ़ें।
- उपयुक्त आकार और जल स्थिरता वाले आहार का चयन करें।

होते हैं या 45-70 प्रतिशत नमी वाले जीवित आहार शामिल होते हैं। गीले आहार मुख्य रूप से युवाओं, मांसाहारी प्रजातियों और ब्रूडर्स को खिलाने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

मछली के जीवनस्तर और आकार के अनुसार आहार

- **लार्वा या फ्राई के लिए:** मैश आहार, गीले/पेस्ट आहार/जीवित आहार इत्यादि उपयोग किए जाते हैं।
- **फिंगरलिंग/बड़े/ब्रूडर्स के लिए:** पैलेटेड आहार/जीवित आहार आदि उपयोग किए जाते हैं।

- **ग्रैनुलर आहार या आहार के टुकड़े:** ये बहुत छोटे और गोल आकार के अनाज के समान होते हैं।

गैर-शुष्क (नम/गीले) आहार: ये दो प्रकार के हैं:

- **नम आहार:** ये दोनों गीले और सूखे अवयवों या मिश्रित नमी के साथ केवल सूखे अवयवों का मिश्रण होते हैं। नम आहार में नमी की मात्रा 18 से 40 प्रतिशत के बीच होती है।
- **गीले या पेस्ट आहार:** गीले आहार, गीले अवयवों से बने होते हैं और जाली या छलनी के माध्यम से खिलाए जाते हैं। इसमें आमतौर पर ट्रैश फिश, झींगा आदि जैसे गीले तत्व शामिल

प्रोटीन स्रोत

शुष्क आहार

मैश आहार

पैलेटेड आहार

पपड़ी आहार

आहार के टुकड़े

मछली की खाने की आदतों के अनुसार आहार

- **शाकाहारी और सर्वाहारी मछलियों के लिए:** सूखे/नम आहार (पौधे आधारित सामग्री/जीवित आहार) उपयोग किए जाते हैं।
- **मांसाहारी मछलियों के लिए:** सूखे आहार (पशु आधारित घटक जैसे फिश मील)/नम आहार (ट्रैश फिश), झींगा/जीवित आहार (ट्यूबिफेक्स, केंचुआ, कीट लार्वा, रक्त कीड़े आदि) उपयोग किए जाते हैं।

मछली की आवश्यकता के अनुसार सही प्रकार का लाइव आहार चुनें

प्राकृतिक परिस्थितियों में कई प्रकार के लाइव आहार उपलब्ध होते हैं जैसे कि इन्फोसोरिया (प्रोटोजेन), कॉपपोड्स, क्लेडोसेरांस, रोटिफर, आर्टेमिया नाउप्ली आदि और अन्य जीव जैसे ट्यूबिफेक्स, काईरोनोमिड लार्वा, केंचुआ आदि। विभिन्न प्रकार की मछलियां, भिन्न अवस्थाओं में लाइव आहार के आकार के साथ-साथ अपने मुंह के आकार के अनुसार अलग तरह के लाइव आहार पसंद करती हैं (सारणी-2)। इसलिए मछली की आवश्यकता के अनुसार सही प्रकार के लाइव आहार का चयन करना आवश्यक है।

आहार के अन्य प्रकार

सूखे आहार

ये पोषाहार पोषक मान खराब हुए बिना लंबे समय तक जमे हुए रूप में रह सकते हैं। ये क्यूब्स रूप में उपलब्ध होते हैं, जो टैंक की दीवार पर चिपके रहते हैं। मछलियां इसे घुलने के साथ ही कुतरती हैं।

औषधि मिला हुआ आहार

मछली को दवा देने के लिए मेडिकेटेड फिश फूड एक सुरक्षित और प्रभावी तरीका है। एक लाभ यह है कि औषधीय आहार जलीय वातावरण को दूषित नहीं करता है। स्नान उपचारों के विपरीत, मछलीघर में मछली, निस्पंदन और शैवाल के विकास को नकारात्मक रूप से प्रभावित नहीं करता है। परजीवी औषधीय आहार द्वारा स्पॉट पर ही मर जाते हैं, क्योंकि मछली इसका सेवन करती है।

आहार खिलाने की विधियां

हाथ से खिलाना

यह विधि छोटे आकार के तालाबों /टंकियों/टैंकों में मछलियों को आहार खिलाने के लिए उपयोग की जाती है। इसमें प्रति दिन एक ही व्यक्ति द्वारा निर्धारित स्थान और

हैंड पैलेटाइजर

बिजली द्वारा संचालित पैलेटाइजर

पैलेटेड आहार तैयार करने के लिए आहार मिल

निश्चित समय पर आवश्यक मात्रा में आहार वितरित किया जाना चाहिए। इस तरह के अभ्यास से आहार को अपव्यय होने से बचाया जा सकता है। आहार अपव्यय और प्रदूषण को रोकने के लिए बहुत जल्दी या बहुत ज्यादा न खिलाएं।

ट्रे में खिलाना

इस विधि में तालाबों/टैंकों में विभिन्न स्थानों पर जालीदार/प्लास्टिक ट्रे लगायी जाती है और इनमें आहार (सूखा/आटा/गैर-सूखा) रखा जाता है। ट्रे फीडिंग द्वारा मछली द्वारा खपत/छोड़ी गई मात्रा के बारे में सही जानकारी प्राप्त की जा सकती है ताकि इसे अधिक सटीक तरीके से समायोजित किया जा सके।

फीडिंग दर, समय और आवृत्ति

फीडिंग दर, समय और आवृत्ति मछली की जीवन अवस्था पर और साथ ही

स्वचालित आहार फीडर

बड़े आकार की कल्चर प्रणालियों में बहुत अधिक अपव्यय के बिना एक स्वचालित या मांग आहार फीडर मछली को अधिक प्रभावी ढंग से खिलाने के लिए

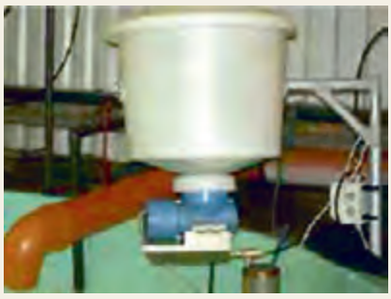

स्वचालित मांग फीडर

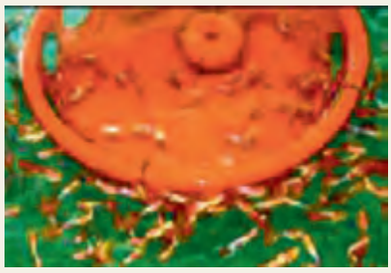

प्लास्टिक ट्रे

कुशल विकल्प है। स्वचालित मांग आहार फीडर का उपयोग तालाब में मछली स्टॉक के आधार पर आहार की गणना की गई मात्रा को निकालने के लिए किया जाता है। मछली जरुरत की दर से ज्यादा चारा ले सकती है। स्वचालित डिमांड आहार प्रभावी समय की बचत करते हैं और पैलेटेड आहार फीडर को वितरित करने के लिए प्रभावी होते हैं।

एक्वेरियम में विचरण करती सजावटी मछली

मोइना

केंचुआ

मछली के शरीर के वजन पर निर्भर करती है। इसके अलावा, आहार की स्वीकृति और उपयोग तापमान, घुलित ऑक्सीजन आदि जैसे इष्टतम पर्यावरणीय परिस्थितियों पर भी आधारित होती है। मछली की चयापचय गतिविधियां इन स्थितियों से सीधे संबंधित होती हैं।

आहार की कुल मात्रा = मछली का औसत आकार (शरीर का वजन) × आहार दर (प्रतिशत) × तालाब में मछलियों की कुल संख्या/100

फीडिंग का सही समय

मछलियों में आहार सेवन और पाचन क्षमता, तापमान, पी-एच, घुलित ऑक्सीजन आदि जैसे विभिन्न पर्यावरणीय कारकों पर निर्भर करता है। बहुत अधिक/कम तापमान या घुलित ऑक्सीजन 5.0 मि.ग्रा./लीटर से कम जैसे कारक सीधे मछली के चयापचय को प्रभावित करते हैं। इसलिए उस समय फीडिंग करना महत्वपूर्ण है, जब मछली आहार का सेवन कर सकती है और पाचन प्रक्रिया के दौरान तनावमुक्त रह सकती है। रोजाना निश्चित समय पर सूर्योदय के बाद मछलियों को फीडिंग कराएं और देर शाम या रात के समय कभी न खिलाएं।

फीडिंग-कितनी बार

मछली शुरुआती दिनों में तेजी से बढ़ती है तो इसकी चयापचय गतिविधियों और समग्र विकास के लिए लगातार अंतराल पर आहार खिलाया जाना चाहिए। विकास दर पानी की गुणवत्ता के मापदंडों, पर्यावरण की स्थिति सहित विभिन्न कारकों के आधार पर फीडिंग आवृत्ति को कम या बढ़ाया जा सकता है। सारणी-4 में एक सामान्यीकृत फीडिंग आवृत्ति प्रस्तुत की गई है।

जीवित मत्स्य प्रयोगशाला

खेत तालाब से आई जीवन में हरियाली

दीपक हरि रानडे, इन्दु स्वरूप, ओम प्रकाश गिरोठिया, दुष्यंत भगत और **आशीष उपाध्याय**
अखिल भारतीय समन्वित शुष्क खेती अनुसंधान परियोजना, राविसिकृविवि परिसर,
कृषि महाविद्यालय, इन्दौर-452001 (मध्य प्रदेश)

" शुष्क खेती अनुसंधान परियोजना, कृषि महाविद्यालय (इंदौर) के वैज्ञानिक, किसानों को वर्षा जल बचाने के लिए खेतों में तालाब बनाने का प्रशिक्षण दे रहे हैं। मध्य प्रदेश के इंदौर जिले के सांवेर तहसील के ग्राम निग्नोटी के किसान श्री बालू सिंह ने इस परियोजना का लाभ उठाते हुए अपने खेत में तालाब बनाकर वर्षा जल का संरक्षण किया। आज इस तालाब के पानी से सिंचाई करके वह सोयाबीन, चना और प्याज की भरपूर उपज ले रहे हैं। इससे एक तरफ जहां अतिरिक्त उत्पादन होने से उनकी आय बढ़ रही है, वहीं दूसरी ओर बरसात के समय बहकर बेकार चले जाना वाला जल अब खेत तालाब के जरिये फसलों की पैदावार बढ़ाने के काम आ रहा है। "

तालाब निर्माण

अपवाहित वर्षा जल एकत्रीकरण

शुष्क खेती परियोजना, कृषि महाविद्यालय इन्दौर के वैज्ञानिकों का दल मालवा क्षेत्र के विभिन्न स्थानों का समय-समय पर भ्रमण कर क्षेत्र के किसानों द्वारा अपनाई जा रही विभिन्न कृषि पद्धतियों का अध्ययन करता रहता है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य उनकी कमियों की पहचान कर उसमें वैज्ञानिक दृष्टि से अनुसंधान कर कृषकों को उन्नत तकनीक प्रदान करना है। इसका लक्ष्य किसानों की फसल पैदावार व आय में वृद्धि करना है। यह मैदानी अध्ययन इस क्षेत्र में भविष्य में किए जाने वाले अनुसंधान कार्यों की दिशा तय करता है।

इस दल द्वारा यह भी पाया गया है कि उन्नत वैज्ञानिक विधियों को अपनाने के लिए कृषक बंधुओं में कुछ अवधारणाओं की भी मान्यता रहती है। कृषकों को उन्नत तकनीक अपनाने के लिए प्रेरित करने हेतु दल के सदस्य लगातार प्रयासरत रहते हैं। ऐसा ही एक प्रयास इस दल द्वारा वर्ष 2010-2011 में इन्दौर जिले की सांवेर तहसील में ग्राम निग्नोटी में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा वित्त पोषित परियोजना 'राष्ट्रीय नवाचार मौसम अनुकूलित कृषि परियोजना (एनआईसीआरए)' द्वारा प्रारंभ किया गया। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य बदलते मौसम के तारतम्य में फसलों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को कम करना है। इसके लिए आकस्मिक कार्य योजना, सिंचाई जल की उपलब्धता बढ़ाना तथा उन्नत कृषि यंत्रों का उपयोग कर फसल उत्पादन में लगने वाले खर्च को कम करना था।

वर्ष 2010 में प्रारंभिक अध्ययन में यह ज्ञात हुआ कि किसान फसलों की सिंचाई के लिए प्राय: नलकूप का प्रयोग करते हैं। अधिकतर कृषकों के यहां एक से अधिक नलकूप हैं। इसके कारण भूजल काफी गहराई

तालाब में संचित जल का खेती में उपयोग

पर चला गया है। निग्नोटी गांव में खुले कुएं प्रचलन में ही नहीं हैं। हालांकि इस गांव की मृदा काली गहरी होने के कारण उपजाऊ है। सिंचाई जल की कमी के कारण अधिकांश किसान खरीफ के उपरांत रबी में चने की फसल लेते हैं। अच्छी वर्षा होने के बाद भी नलकूपों से जल की उपलब्धता दिसंबर के पश्चात अत्यधिक कम हो जाती है। अत: यह आंकलन किया गया कि यदि खेतों से प्रवाहित होने वाले जल अपवाह को एक स्थान पर संग्रहित किया जाये तो इसके उपयोग से न केवल रबी फसलों की पैदावार को बढ़ाया जा सकता है बल्कि वर्षाकाल के दौरान पड़ने वाले लंबे शुष्क दिनों में खरीफ फसलों को जीवनदायिनी सिंचाई जल प्रदान किया जा सकता है। इसलिए प्रत्येक किसान के खेत में उचित स्थान पर वर्षा जल संग्रहित कर फसलों की पैदावार को बढ़ाने के साथ-साथ रबी मौसम में चने के स्थान पर मुख्य फसलों जैसे आलू, प्याज, लहसुन व गेहूं इत्यादि का समावेश किया जा सकता है। शुरू में इस गांव के किसान इस तकनीक को अपनाने के लिए हिचकिचा रहे थे। उनकी अवधारणा

नलकूप के माध्यम से (जिन तालाबों में बहुत ही कम मात्रा में जल निकासी हो रही थी) पुनः भराव

यह है कि खेत में तालाब बनाने से उनके खेत का एक बहुत बड़ा भाग व्यर्थ होकर फसल उत्पादन में प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है। निरंतर प्रयासों के उपरांत श्री बालूसिंह को इस कार्य के लिए टीम के सदस्य मनाने में सफल हुए।

मार्च 2011 में श्री सिंह के खेत में एक उचित स्थान का चयन मौजूदा जल निकास मार्ग में ही किया गया। इस कार्य के लिए सहभागिता के आधार पर परियोजना के माध्यम

वर्षा जल से लगातार भर रहा तालाब

से 150 घंटे के लिए जे.सी.बी. मशीन उपलब्ध कराई गई। साथ ही खोदी गई मिट्टी को दूसरे कृषकों के अन्यत्र खेतों के निचले भागों में खेतों को समतल बनाने के लिए 2 डम्परों का उपयोग किया गया। इसका पूर्ण व्यय किसानों द्वारा स्वयं उठाया गया। इस प्रकार श्री सिंह की तालाब खुदाई में जो भी लागत आई उसे उन्होंने तालाब की मिट्टी बेचकर पूर्ण कर लिया। वर्ष 2011 में ही लगभग 1400 घनमीटर का तालाब, जिसका आकार 37×25 मीटर तथा गहराई 4 मीटर थी, खोदा गया। वर्ष 2011 के वर्षाकाल के दौरान यह तालाब पूरी तरह से भर गया। इसका उपयोग उन्होंने खरीफ एवं रबी फसलों के लिए किया। इसके साथ ही कृषक द्वारा तालाब खाली होने के बाद इसे नलकूल के माध्यम से (जिनसे बहुत ही कम मात्रा में जल निकासी हो रही थी) पुनः भरा गया। इस प्रकार श्री बालूसिंह

ट्यूबवेल से जलभरण

द्वारा सतही एवं भूजल का संयुक्त रूप से उपयोग किया जाने लगा। वर्ष 2011 से लेकर आज तक यह तालाब वर्षा जल से लगातार भर रहा है एवं प्रतिवर्ष किसानों द्वारा भूजल एवं सतही जल का समुचित उपयोग किया जा रहा है।

तालाब निर्माण के पूर्व

तालाब निर्माण के पूर्व श्री सिंह खरीफ के दौरान सोयाबीन का उत्पादन करते आ रहे थे। इससे मात्र 12 क्विंटल/हैक्टर उपज प्राप्त हो रही थी। वर्षाकाल के उपरांत अधिकतर भाग में चने की पैदावार रबी मौसम में की जाती थी, जिससे मात्र 6 क्विंटल/हैक्टर उपज प्राप्त होती थी। पानी के अभाव में कई बार रबी की कोई भी फसल सफलतापूर्वक नहीं उगाई जा सकती थी।

तालाब निर्माण के बाद

वर्ष 2011 में कृषि महाविद्यालय इन्दौर, निक्रा (एनआईसीआरए) परियोजना के अंतर्गत पूर्णतः सहभागिता के आधार पर श्री बालूसिंह के खेत में एक जल संग्रहण तालाब बनाया गया, जिसकी जल संग्रहण क्षमता 1400 घन मीटर थी। तालाब निर्माण के लिए उचित स्थान का चयन इस प्रकार से किया गया था कि प्राकृतिक रूप से खेतों में बहने वाले जल निकास मार्ग अवरूद्ध न हों बल्कि तालाब भरने के उपरांत अपने पूर्व मार्ग पर ही अतिरिक्त जल की निकासी करते रहें। यह भी ध्यान रखा गया कि तालाब भरने के उपरांत श्री सिंह के किसी भी खेत में जल जमाव न हो तथा तालाब के निचले वाले खेतों में बहने वाला अतिरिक्त जल किसी प्रकार का भूक्षरण न करे। मार्च 2011 में तालाब बनाया गया और प्रथम वर्षा में ही जून

प्याज उत्पादन

खेत तालाब से संचित जल से भरपूर प्याज उत्पादन

2011 में यह तालाब पूर्णत: भर गया। इस संचयित जल का उपयोग खरीफ के दौरान लंबे समय तक अवर्षा की स्थिति में जीवनदायिनी सिंचाई सोयाबीन फसल को प्रदान की गयी। इससे अन्य किसानों की तुलना में श्री बालूसिंह को लगभग 10 क्विंटल/हैक्टर अधिक उपज प्राप्त हुई। पुन: यह तालाब सितंबर 2011 में जल अपवाह से पूर्णत: भर गया जिसका उपयोग रबी फसल के लिए पलेवा के रूप में किया गया। इससे 7 बीघा जमीन सिंचित की गई। इस प्रकार तालाब में संचयित जल और ट्यूबवेल के जल के समन्वित उपयोग से 12 बीघा में दूसरा पानी 15-20 दिनों की अवस्था में देना संभव हो सका। इस कारण वर्षा जल के उचित संग्रहण से तालाब बनाने के उपरांत श्री बालूसिंह द्वारा 80 क्विंटल चना का उत्पादन प्राप्त किया गया जो कि तालाब निर्माण पूर्व के चने के उत्पादन से लगभग तीन गुना अधिक था। इससे उन्हें देसी चने की तुलना में अधिक कीमत प्राप्त हुई। अत: इस बात से यह स्पष्ट है कि तालाब निर्माण श्री सिंह के लिए प्रथम वर्ष ही अत्यंत लाभदायक रहा एवं उनके द्वारा अतिरिक्त उत्पादन के साथ-साथ अधिक आय भी प्राप्त की गई।

अतिरिक्त उत्पादन

वर्ष 2013 से उनके द्वारा रबी में चने के अतिरिक्त प्याज का उत्पादन भी 1 बीघा में प्रारंभ किया गया तथा लगभग 100 क्विंटल प्याज का उत्पादन कर अतिरिक्त आय प्राप्त की गई। इसके उपरांत लगातार 3 बीघा में उनके द्वारा प्याज उगाया जा रहा है तथा 300 क्विंटल प्याज का उत्पादन कर अतिरिक्त लाभ प्राप्त किया जा रहा है।

तालाब निर्माण के पूर्व उनके द्वारा सिंचाई जल प्राप्त करने के लिए कई बार बोरिंग कर ट्यूबवेल से पानी प्राप्त करने का प्रयास किया गया। पर्याप्त भूजल उपलब्ध न होने के कारण इनमें किया गया खर्च व्यर्थ गया। तालाब निर्माण के समय भी श्री सिंह द्वारा खुदाई में निकली मिट्टी का उपयोग न केवल अपने खेतों को समतल बनाने बल्कि उसकी उर्वरता बढ़ाने के लिए किया गया। अतिरिक्त खुदी हुई मिट्टी को अन्य किसानों के खेतों में डालकर प्रति डम्पर 300 रुपये की दर से लगभग 53,100 रुपये की आय भी प्राप्त की गई। वर्ष 2012 के उपरांत श्री बालूसिंह तालाब में संचित जल का उपयोग खरीफ व रबी की फसलों के लिए करते हैं। तालाब खाली होने के बाद उसको ट्यूबवेल से पुन: भरकर इसका उपयोग सिंचाई के लिए करते हैं। ट्यूबवेल से निकलने वाला जल नवम्बर-दिसंबर के पश्चात एक-एक कर झटके मार कर निकलता है, जिससे पर्याप्त सिंचाई संभव नहीं हो पाती। अत: इस रिक्त तालाब में पानी का कई दिनों तक संग्रहण कर बड़ी मोटर द्वारा इसका उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। श्री बालूसिंह का तालाब निर्माण का फैसला उनके लिए अत्यंत लाभदायक रहा। साथ ही साथ अन्य किसानों को प्रोत्साहित करने वाला व प्रेरणादायक रहा। इसके अलावा उनकी अवधारणा कि तालाब निर्माण में खेती का एक हिस्सा देना नुकसानदायक होता है, गलत साबित हुई। ■

मृदा स्वास्थ्य की जानकारी हेतु उपकरण

मृदा में नमी, मृदा तापमान, पोषक तत्वों व जल-स्तर के बारे में पूरी जानकारी देने वाले एक ऐसे तकनीकी यंत्र का विकास किया गया है जो सेंसर नोड्स द्वारा संचालित होता है। यह कृषि क्षेत्र के विभिन्न मानकों को सुनिश्चित करने के लिए इस्तेमाल होगा। साथ ही इस यंत्र का प्रयोग भवन निर्माण कार्य, यातायात को नियंत्रित करने व स्वास्थ्य-देखभाल संबंधित क्षेत्रों में भी किया जा सकता है। यह यंत्र भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर के कंप्यूटर विज्ञान और इंजीनियरिंग विभाग के शोधकर्ताओं द्वारा निर्मित किया गया है।

यह यंत्र दो भागों द्वारा संचालित है। इसे नियंत्रित करने के लिए इंटरनेट की भी जरुरत नहीं है। इससे यह देश के दूरस्थ भागों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका एक भाग खेतों में लगा दिया जाता है। यह सेंसर नोड्स, एक प्रोसेसर, एक रेडियो यंत्र और सेन्सर्स की मदद से खेतों की मृदा में नमी, मृदा तापमान व जल-स्तर के बारे में पता लगा लेता है। इसका दूसरा भाग स्वत: ही खेत में मौजूद भाग के संपर्क में आने से रीडिंग प्राप्त करके दर्शाता है। इस यंत्र का आकार 10×10 सें.मी. है, बिल्कुल एक टिफिन बॉक्स के साइज का यह वायरलेस प्रकार का उपकरण है। यह डेटा, डेटा विश्लेषण और डेटा विजुअलाईजेशन और अन्य कार्यों के उपयोग में लाया जाता है।

इस वायरलेस यंत्र की मुख्य बाधा इसकी बैटरी का मूल्य है, जो इसको जनसाधारण की पहुंच से दूर कर रहा है। अगर इसको हटा दिया जाए तो इसकी लागत काफी कम हो जाएगी और इसका इस्तेमाल इंसानी मेहनत को काफी कम कर देगा। इस यंत्र की मदद से किसान नए वैज्ञानिक तरीकों द्वारा खेती कर आगे बढ़ सकते हैं। ■

सोयाबीन की बिक्री में ध्यान रखने योग्य बिन्दु

पुरुषोत्तम शर्मा
भाकृअनुप-भारतीय सोयाबीन अनुसंधान संस्थान, इन्दौर (मध्य प्रदेश)

"सोयाबीन, इक्कीसवीं सदी की एक चमत्कारिक फसल है। इसमें पाये जाने वाले विविध लाभकारी गुणों के कारण यह भारत की ग्रामीण जनता में व्याप्त प्रोटीन के कुपोषण की समस्या को कम करने का सामर्थ्य रखती है। यह एक तेलयुक्त फसल है। इसमें प्रोटीन की मात्रा औसतन 40 प्रतिशत तथा तेल की मात्रा लगभग 20 प्रतिशत होती है। देश में इसकी व्यावसायिक खेती 1970 के दशक के प्रारंभ में शुरू हुई थी। विगत 40-45 वर्षों में देश में सोयाबीन के क्षेत्रफल तथा उत्पादन में निरंतर वृद्धि हुई है तथा सोयाबीन देश में प्रमुख तिलहनी फसल के रूप में स्थापित हो गई है। वर्तमान में सोयाबीन की फसल देश में करीब 110 लाख हैक्टर क्षेत्र में बोयी जाती है। देश में सोयाबीन के कुल क्षेत्रफल का लगभग 53 प्रतिशत मध्य प्रदेश में होने से इसको 'सोया-राज्य' कहा जाता है। मध्य प्रदेश के बाद महाराष्ट्र और राजस्थान, क्षेत्रफल व उत्पादन के आधार पर क्रमशः दूसरे एवं तीसरे स्थान पर हैं। किसानों, अनुसंधानकर्ताओं एवं विस्तारकर्ताओं के अथक प्रयासों के कारण देश के अन्य राज्यों में भी सोयाबीन की खेती के क्षेत्रफल में वृद्धि हो रही है। इन राज्यों में कर्नाटक, तेलंगाना एवं गुजरात प्रमुख हैं। सोयाबीन अन्य खरीफ फसलों की तुलना में भी अधिक लाभदायक है।"

किसान अपनी फसल की बिक्री के समय कुछ छोटी-छोटी बातों का ध्यान नहीं रखते हैं, जिससे उनको अपने कृषि उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। किसानों की अक्सर शिकायत रहती है कि उनको अपनी उपज कम कीमत पर बेचनी पड़ती है। बाजार में व्यापारी उनको फसल का उचित मूल्य नहीं देते हैं, जबकि दूसरी ओर व्यापारियों से बात करने पर पता चलता है कि किसान अपने कृषि उत्पाद को बेचने से पूर्व की तैयारी नहीं करते हैं या कहें कि खलिहान से सीधा बाजार में विपणन के लिए ले आते हैं। कृषि उत्पाद की बिक्री से पूर्व की तैयारी जैसे उत्पाद छनाई व सफाई, अनाज व तिलहन की सुखाई आदि कार्य व्यापारियों को करने पड़ते हैं और उनका लाभ भी व्यापारियों को ही मिलता है।

सोयाबीन की फसल सभी प्रमुख उत्पादक राज्यों में कुछ समय बाद पकने की स्थिति में होगी तथा किसान अपनी फसल को बेचने की तैयारी करेंगे। किसान अपनी 3-4 महीनों की अथक मेहनत से तैयार फसल को उचित तरीके से बेचकर अधिक आमदनी कमा सकते हैं। इस फसल को उचित तरीके से बेचने के लिए किसानों को निम्नलिखित बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिए:

फसल की सही समय पर कटाई

अधिकतर देखने में आता है कि किसान सोयाबीन को फसल के पकने की सही अवस्था पर नहीं काटते हैं। इससे उनको उपज का तो नुकसान होता ही है, फसल की गुणवत्ता भी खराब होती

विक्रय के अन्य विकल्प

वर्ष 2003 में भारत सरकार द्वारा कृषि विपणन में सुधार शुरू किए गये, जिसके अंतर्गत कृषि उपज विपणन (विनियमन एवं विकास) अधिनियम, 2003 के रूप में एक आदर्श अधिनियम बनाकर राज्य सरकारों को लागू करने के लिए दिया गया था। ज्यादातर राज्य सरकारों ने आदर्श कृषि विपणन अधिनियम के प्रस्तावों को स्वीकार करते हुए अपने कृषि उपज विपणन अधिनियम में बदलाव कर लिया है। केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा किए गये कृषि विपणन में उपरोक्त सुधार से किसानों को फसल विक्रय के लिए मंडी के अलावा अन्य विकल्प भी मिल गये हैं, जिनके माध्यम से किसान अपनी फसल बेचकर अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। कृषि विपणन के अन्य विकल्प जैसे-संविदा खेती, समूह में विक्रय, खरीददार द्वारा किसान के खेत से सीधी खरीद, ई-विपणन, उत्पाद का श्रेणी एवं मानक के अनुसार विक्रय आदि।

संविदा खेती

संविदा या अनुबंध खेती के अंतर्गत क्रेता (जैसे प्रसंस्करण उद्योग, निर्यात इकाइयां, खुदरा विक्रेता और व्यापारी आदि) किसान से उसकी फसल बुआई के समय ही तय कीमत एवं उत्पाद मानकों पर उसका कृषि उत्पाद क्रय करने का अनुबंध कर लेता है। इस प्रकार के पूर्व अनुबंध करने से फसल कटाई के बाद बाजार में होने वाले भावों में उतार-चढ़ाव के जोखिम से किसान बच जाता है। किसान अपनी फसल के उच्च गुणवत्तायुक्त एवं अधिक उपज लेने में ध्यान केंद्रित कर सकता है। संविदा खेती किसानों तथा क्रेताओं के लिए बेहतर विकल्प है जिससे दोनों ही बाजार में होने वाले कीमतों के जोखिम से बचाव कर सकते हैं। इसमें क्रेता उत्पाद क्रय अथवा एकत्रीकरण में कम लागत लगती है, जिसका कुछ हिस्सा किसानों को अधिक मूल्य के रूप में दे सकता है।

किसान के खेत से सीधी खरीद

कृषि विपणन में हुए नीतिगत सुधारों के उपरांत क्रेता को किसानों के खेत या गांव से कृषि उत्पाद को क्रय करने की छूट मिल गयी है। क्रेता (जैसे खुदरा विक्रेता, निर्यात इकाइयां, प्रसंस्करण उद्योग और व्यापारी आदि) गांव में अपना संग्रह केन्द्र खोलकर आसपास के किसानों से उनके कृषि उत्पादों को गांव में ही खरीद सकता है। कम्पनी के संग्रह केन्द्र पर उत्पाद की तुलाई और छनाई आदि की व्यवस्था होती है तथा किसानों का कृषि उत्पाद क्रय कर उत्पाद गुणवत्तानुरूप तय कीमत के अनुसार उसकी कुल रकम तुरन्त दे दी जाती है। ये संग्रह केन्द्र क्रेता द्वारा कुछ समय के लिए ही खोले जाते हैं।

समूह में विक्रय

देश में ज्यादातर किसान छोटे एवं सीमांत श्रेणी के हैं तथा उनकी विपणन के लिए उपज भी कम ही होती है। ये किसान अपनी-अपनी उपज को अपने हिसाब से बाजार ले जाते हैं। इससे सभी किसानों का समय व्यर्थ होता है तथा उनको परिवहन का खर्चा भी ज्यादा लगता है। फसल की बेचने योग्य मात्रा कम होने के कारण उत्पाद का मूल्य भी कम मिलता है। बड़े खरीददार के सामने एक छोटा किसान मूल्य निर्धारण वार्ता (मोलभाव) में बौना साबित होता है। तथा अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं ले पाता। इस परिस्थिति से बचने के लिए किसान अपना एक समूह (2-3 गांवों के किसान एक साथ मिलकर) बनाकर अपनी-अपनी उपज को विक्रय के लिए एकत्रित करके एक साथ (ज्यादा मात्रा में-उदाहरणार्थ 5-10 बोरी के बजाय 5-10 ट्रक एक साथ) बेचेंगे तो कोई भी खरीददार/व्यापारी ज्यादा मूल्य चुकाने के लिए तैयार होगा। खरीददार को जगह-जगह उपज एकत्रित नहीं करनी होगी, जिससे उसके समय एवं खर्चे की बचत होगी। समूह में कृषि उत्पाद का विपणन करने से किसानों की प्रति इकाई परिवहन की लागत में भी कमी आयेगी तथा किसान खरीददार के साथ भाव तय करने में बराबरी की स्थिति में होगा। इसके अलावा समूह की विक्रय योग्य कृषि उत्पाद की मात्रा ज्यादा है तो खरीददार उनके गांव आकर भी उपज खरीद सकता है।

ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार (e-NAM) के माध्यम से विपणन

ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार की शुरुआत अप्रैल 2016 में की गई है। इसके अंतर्गत देश की प्रमुख 585 कृषि उपज मंडियों को एक इलेक्ट्रॉनिक पोर्टल (www.enam.gov.in) के द्वारा आपस में जोड़कर विक्रेताओं (किसानों) तथा क्रेताओं (प्रसंस्करण उद्योग, निर्यात इकाइयां और खुदरा विक्रेता व्यापारी आदि) को ट्रेडिंग प्लेटफार्म उपलब्ध करवाया गया है। यह एक राष्ट्रीय स्तर का पोर्टल है जिसका उद्देश्य देश के विभिन्न राज्यों में स्थित कृषि उपज मंडी श्रृंखला को इंटरनेट के माध्यम से जोड़कर एकीकृत राष्ट्रीय कृषि उपज बाजार बनाना है। इसमें किसी भी एक स्थान से दूसरे स्थान के लिए कृषि उपज का विपणन आसानी से व कम समय में हो। राष्ट्रीय कृषि बाजार पोर्टल देश की मंडियों से संबंधित सूचना तथा सेवा प्रदान करने की एकल खिड़की प्रणाली है। इसमें कृषि उपज की आवक एवं मूल्य संबंधित जानकारी, क्रय एवं विक्रय के व्यापार प्रस्ताव, व्यापार प्रस्तावों पर प्रतिक्रिया देने का प्रावधान आदि सेवाएं उपलब्ध की जा रही हैं। ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार प्रणाली से अब तक देश के 16 राज्यों और 2 केन्द्र शासित प्रदेशों की 585 कृषि उपज मंडियां जुड़ चुकी हैं। इसके साथ ही लगभग 69 कृषि जिंस भी, जिनमें अनाज, दालें व तिलहन वाली फसले (फल व सब्जियां) मसालें, कपास और गुड़ आदि शामिल हैं, का व्यापार शुरू हो चुका है।

है। पकने के बाद फसल खेत में 2-3 दिनों तक भी ज्यादा खड़ी रह जाती है तो उसकी फलियां छिटकने लग जाती हैं। खासकर जब फलियां सूख गयी हों। इससे सोयाबीन के दाने खेत में बिखरने लग जाते हैं तथा किसान को उत्पादन कम मिलता है। इस हानि से बचने के लिए किसानों को सोयाबीन की फसल सही अवस्था में काट लेनी चाहिए। सोयाबीन की फसल को काटने की अवस्था होती है, जब पत्तियां पीली पड़कर झड़ने लगें तथा फलियां पीली या भूरी हो जायें। फलियों को 90-95 प्रतिशत तक सूखने से पहले ही फसल काट लेना चाहिए। फसल काटने के समय नमी 15-16 प्रतिशत होनी चाहिए।

कृषि उपज सफाई मशीन

मंडी में ले अधिक दाम

उचित तरीके से गहाई (थ्रेशिंग)

अक्सर देखा जाता है कि फसल को बेचने की जल्दी में किसान उचित समय पर व सही तरीके से थ्रेशिंग नहीं करते हैं। थ्रेशर के ड्रम की गति ज्यादा रखने से सोयाबीन के दाने टूटने लगते हैं। इससे उपज की गुणवत्ता खराब हो जाती है। इसका असर उपज के मूल्य पर पड़ता है तथा किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य नहीं मिलता है। सोयाबीन उत्पाद को यदि बीज के रूप में उपयोग में लाना है तो सोयाबीन की गहाई के लिए थ्रेशर में ड्रम की गति (स्पीड) 350-400 आर.पी.एम. पर ही रखें जिससे कि बीज की अंकुरण क्षमता पर विपरीत प्रभाव न पड़े।

तैयार फसल को सुखाना

अधिकतर किसान सोयाबीन की उपज को खलिहान से निकालने के तुरन्त बाद ही बाजार में बेचने के लिए ले जाते हैं। इसके पीछे उनकी सोच होती है कि गीली सोयाबीन बाजार में बेचने से उनको अधिक तौल का लाभ मिल जायेगा। हालांकि कुछ छोटे व गरीब किसानों को कर्ज चुकाने की मजबूरी के कारण भी ऐसा करना पड़ता है। गीली सोयाबीन बाजार में ले जाने से लाभ की बजाय हानि ज्यादा होने की आशंका रहती है। गीली सोयाबीन का ज्यादा दिनों तक भंडारण भी नहीं किया जा सकता है, क्योंकि नमी ज्यादा होने के कारण फफूंद/कीट लगकर जल्दी खराब हो जाती है। खरीददार/व्यापारी सोयाबीन खरीदते समय उसमें नमी की मात्रा की जांच करते हैं। फसल में नमी की मात्रा की दर से ही उसका मूल्य तय होता है। अगर किसान की लायी हुई फसल में नमी की मात्रा ज्यादा है तो खरीददार ज्यादा नमी का 'काटा' काटते हैं अथवा उसका भाव कम देते हैं। इससे बचने के लिए किसानों को चाहिए कि अपनी सोयाबीन की उपज को 2-3 दिनों तक खलिहान में सुखाकर ही बाजार में ले जायें। ध्यान रहे उस समय उपज में नमी की मात्रा 10-12 प्रतिशत हो।

सोयाबीन श्रेणीकरण मशीन

उत्पाद की सफाई

किसान सोयाबीन की उपज को बेचने के लिए मंडी ले जाने से पहले उसकी छनाई/सफाई भी नहीं करते हैं। थ्रेशर से निकली सोयाबीन को ऐसे ही बाजार ले जाते हैं। ऐसी उपज में कई प्रकार की अशुद्धियां जैसे डंठल, मिट्टी और कंकड़ आदि होते हैं। उपज की सफाई नहीं होने से अशुद्धियां भी उपज के साथ मंडी पहुंच पाती हैं, जिससे परिवहन लागत भी बढ़ जाती है। फसल को इस तरह से मंडी ले जाने पर खरीददार उसका कम मूल्य भी देते हैं। अत: किसानों को अपनी उपज का सही मूल्य लेने के लिए उसको साफ करके ही बाजार ले जाना चाहिए। साफ सोयाबीन अधिक मूल्य पर बिकती है, क्योंकि उसकी सफाई नहीं करनी पड़ती और समय एवं मेहनत की बचत होती है।

समूह में बेचना

देश में सोयाबीन उगाने वाले ज्यादातर किसान छोटे एवं सीमांत श्रेणी के हैं तथा उनकी विपणन के लिए उपज भी कम ही होती है। प्रत्येक किसान अपनी-अपनी उपज को अपने हिसाब से बाजार ले जाते हैं। इससे सभी किसानों का समय व्यर्थ होता है तथा उनको परिवहन का खर्चा भी ज्यादा लगता है। फसल की बेचने योग्य मात्रा कम होने के कारण उपज का मूल्य भी कम मिलता है।

बाजार का चयन

अधिकतर यह देखा जाता है कि किसान अपनी उपज को बेचने के लिए नजदीक की मंडी में ले जाते हैं। उपज का अधिक मूल्य पाने के लिए किसानों को सबसे पहले अपने आसपास की सभी मंडियों में सोयाबीन के प्रचलित मूल्य का पता करना चाहिए। आजकल सभी प्रमुख समाचारपत्रों, दूरदर्शन के किसान चैनल एवं स्थानीय टीवी चैनलों पर फसल के प्रचलित मूल्य बताये जाते हैं। इसके अलावा मंडी बोर्ड/परिषद की वेबसाइट पर भी आसपास की सभी मंडियों में फसल का क्या दाम चल रहा है, देखे जा सकते हैं। इसके बाद किसानों के आसपास की मंडियों के लिए लगने वाले परिवहन खर्च की गणना कर लेनी चाहिए। जिस मंडी में परिवहन खर्च काटकर, सोयाबीन का ज्यादा दाम मिल रहा हो वहां अपने उत्पाद को बेचने के लिए ले जाना चाहिए।

किसान जब स्थानीय स्तर पर अपनी कृषि उपज बेचने के लिए मंडी (ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार से जुड़ी) में लाते हैं तो उन्हें स्थानीय व्यापारियों के साथ-साथ इंटरनेट के माध्यम से देश के अन्य राज्यों में कार्यरत व्यापारियों को भी अपनी उपज बेचने का विकल्प एवं व्यवस्था रहती है। जहां अच्छे मूल्य मिल रहे हों, किसान वहां बेचने के लिए स्वतंत्र है। किसान अपनी उपज को ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार के जरिये बेचने के लिए इसकी वेबसाइट पर पंजीकृत करें। यह एक बहुत आसान प्रक्रिया है। इसके माध्यम से बेचे गए उत्पाद की कीमत का भुगतान किसानों को तुरन्त कर दिया जाता है।

इस प्रकार सोयाबीन उत्पादक किसान उपरोक्त बातों का ध्यान रखकर अपनी फसल को उचित तरीके से तथा अन्य विकल्पों के माध्यम से विक्रय कर अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। ■

भूमिगत कीटों से ऐसे बचाएं फसल

सुनील कुमार[1], भगवत सिंह राठौड़[2], बजरंग लाल ओला[1] और पी.के. राय[3]

"मृदा और बीज से उत्पन्न होने वाले रोगजनकों के कारण कई बार पौधों में रोगों का पूर्वानुमान और उनका उपचार करना मुश्किल हो जाता है। ऐसे में बुआई से पहले किसान मृदा, बीजजनित रोग और भूमिगत कीट प्रबंधन पर ध्यान देकर फसलों को मिट्टी, बीज और जमीन के अंदर रहने वाले कीटों से होने वाले रोगों से बचा सकते हैं।"

मृदा व बीजजनित रोग

कॉलर रॉट/जड़ गलन/तना गलन

यह रोग मुख्यतः मूंगफली, तिल और टमाटर इत्यादि में होता है। रोग उत्पन्न करने वाले कारक मृदा में रहते हैं। यह रोग बीज व अंकुरित पौधों को ग्रसित कर नुकसान पहुंचाता है, जिससे कि खेत में पौधों की संख्या में काफी कमी हो जाती है। ग्रसित बीज को मृदा से निकालकर देखने पर बीज पर काले कवक दिखाई देते हैं। नम मृदा में यह रोग अधिक होता है। इसमें जड़ों तथा भूमि के पास वाले तने के भाग पर आक्रमण होता है और अधिक संक्रमण होने पर पौधे अंत में सूख जाते हैं।

[1]विषय वस्तु विशेषज्ञ (पौध संरक्षण), [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक सह अध्यक्ष (सस्य विज्ञान); कृषि विज्ञान केन्द्र (सरसों अनुसंधान निदेशालय, भरतपुर) गूंता-बानसूर, अलवर-301402 (राजस्थान); [3]निदेशक, भाकृअनुप-सरसों अनुसंधान निदेशालय, भरतपुर (राजस्थान)

प्रबंधन

- कॉलर रॉट से बचाव के लिए बीज को अधिक गहराई में न बोयें। गहरे बोये बीजों पर संक्रमण शीघ्र व अधिक होता है।
- बचाव के लिए उचित फसल चक्र अपनाएं।
- मूंगफली बीज को ट्राइकोडर्मा विरडी 10 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज से उपचारित करें।
- 10 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा विरडी को 250 कि.ग्रा. पुरानी गोबर खाद में मिलाकर बुआई से 15 दिनों पूर्व खेत में मिलायें।
- डायफेनाकोनेजॉल 25 प्रतिशत ई.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर या प्रोपिकोनेजॉल 25 प्रतिशत ई.सी. 6-7 मि.ली. प्रति 10 लीटर या हेक्साकोनेजॉल 5 प्रतिशत ई.सी 3 मि.ली. प्रति लीटर की दर से छिड़कें।

उकठा रोग

यह फफूंद मृदाजनित रोग है। यह रोग कपास, मिर्च व बैंगन की फसल को किसी भी अवस्था में ग्रसित कर सकता है। रोगकारक फफूंद सर्वप्रथम पौधों की जड़ों में संक्रमण करता है व वाहक ऊतकों में घुस जाता है। पौधे की निचली पत्तियों के किनारे पीले पड़ जाते हैं। बाद में सभी पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती हैं व अंत में पौधा मर जाता है।

- इसके नियंत्रण के लिए बीज को कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुआई करें।
- गर्मी में खेतों की गहरी जुताई करें।
- अमोनियम नाइट्रेट की जगह पर पोटेशियम खाद का प्रयोग करें।

अरगट रोग

यह रोग मुख्यतः बाजरा व राई की फसल को ग्रसित करता है। इस रोग से

ग्रसित बाजरे के सिट्ठे (पुष्प गुच्छ) पर संक्रमित पुष्पक (फ्लोरेट्स) से हनीड्यू (शहद जैसा) क्रीमी-गुलाबी रंग का लसदार (म्युसीलेजिनियस) पदार्थ बाहर निकलता है। 10 से 15 दिनों के अंदर इसे लसदार पदार्थ की बूंदे सूखकर कठोर व काले रंग के स्केलेरोसिया के रूप में बीज की जगह पर बन जाती हैं। ये स्केलेरोसिया, बाजरे के दाने से बड़े व अनियमित आकार के होते हैं। बाजरे के सिट्ठे से दाने निकलते समय यह स्केलेरोसिया बीज में मिल जाता है। इसके रोगकारक (इनोकुलम) स्केलेरोसिया मृदा में या पौधे के अवशेषों में रहते हैं। एवं फसल के दूसरे मौसम में अंकुरित होकर एस्कस बनाते हैं। ये एस्कस बाजरे के सिट्टे को ग्रसित कर नुकसान पहुंचाते हैं।

प्रबंधन

- बीज को बुआई से पूर्व नमक के 20 प्रतिशत घोल (यानी कि 200 ग्राम नमक और 1 लीटर पानी) में लगभग 5 मिनट तक डुबोकर रखें। पानी में तैरते हुए हल्के बीज व कचरे को निकालकर जला दें। शेष बचे हुए बीज को साफ पानी में धोकर छाया में सुखा लें। उसके बाद बुआई के काम में लें।

आर्द्रगलन

यह रोग मुख्यत: पौधे की छोटी अवस्था में होता है, जो कि लगभग सभी सब्जियों

जड़ गलन

यह रोग मुख्यरूप से ग्वार में लगता है। रोग के लक्षण दिखाई देने पर निम्न उपचार करें।

प्रबंधन

- 10 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा विरडी को 250 कि.ग्रा. पुरानी गोबर खाद में मिलाकर बुआई से 15 दिनों पूर्व खेत में मिलायें।
- ट्राइकोडर्मा विरडी 4-5 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज से उपचारित कर बुआई करें।
- खड़ी फसलों में रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल बनाकर छिड़कें। आवश्यकता अनुसार 10-15 दिनों के अंतराल पर दोहरायें।

जरूरी है कीट नियंत्रण

मूंगफली, टमाटर, मिर्च और गोभी इत्यादि को ग्रसित करता है। खासकर नर्सरी में उगने वाले पौधों में ग्रसित पौधे की जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़कर कमजोर हो जाते हैं तथा नन्हें पौधे गिरकर मर जाते हैं।

प्रबंधन

- नर्सरी को आसपास की भूमि से 4-6 इंच ऊंचा रखें।
- बीज को बुआई पूर्व थाइरम या कैप्टॉन 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बोयें।
- नर्सरी में बुआई पूर्व थाइरम या कैप्टॉन 3-4 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से भूमि में मिलायें।
- रोग के लक्षण दिखाई देने पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। जरुरत पड़ने पर दोबारा करें।

भूमिगत कीट

सफेद लट्ट

यह एक बहुभक्षी कीट है। यह खरीफ में बोई जाने वाली लगभग सभी फसलों जैसे कि बाजरा, ज्वार, गन्ना, मिर्च, भिंडी, बैंगन, मूंगफली एवं ग्वार आदि को ग्रसित कर नुकसान पहुंचाता है।

क्षति

सफेद लट्ट रेशेदार जड़ों को खाकर नष्ट करते हैं एवं मूल जड़ के ऊपर गांठ बनाते हैं। इससे अंत में पौधे मर जाते हैं। सफेद लट्ट मृदा में 5-10 सें.मी. तक की गहराई में रहता है। रात में भृंग (वयस्क कीट) जमीन से बाहर निकल कर पत्ते को खाते हैं। अधिक संक्रमण से पौधे पूरी तरह नष्ट हो जाते हैं।

जीवनकाल

जून में नये-नये सफेद लट्ट जमीन में बहुतायत में रहते हैं। जैसे ही वर्षा शुरू होती है ये सक्रिय हो जाते हैं। भृंग (वयस्क

डाउनी मिल्ड्यू

संक्रमण के परिणामस्वरूप लक्षण अक्सर भिन्न होते हैं। पत्तियों पर क्लोरिसिस के लक्षण नीचे से शुरू होते हैं और धीरे-धीरे ऊपर की पत्तियों पर क्लोरिसिस अधिक दिखाई देते हैं। संक्रमित क्लोरोटिक पत्ते वाले क्षेत्रों पर नीचे की सतह पर अलैंगिक स्पोर बनने में अधिक मदद करता है। आमतौर पर गंभीर रूप से संक्रमित पौधे पर विकास अवरूद्ध हो जाता है और पुष्प गुच्छ नहीं बनते हैं। बाजरे में ग्रीन ईयर के लक्षण फूलों का पत्तेदार संरचनाओं में परिवर्तन होने से होते हैं। इसके उस्पोर मृदा में 5 साल या इससे ज्यादा दिनों तक जीवित रहते हैं, जिससे कि फसल में प्रथम संक्रमण होता है। द्वितीय संक्रमण बरसात के दिनों में बहुत ज्यादा सक्रिय हो जाता है।

प्रबंधन

- इस रोग से बचाव के लिए बीज को मैटालेक्जिल 35 प्रतिशत डब्ल्यू.एस. 6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज या थाइरम 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुआई करें।

कीट) जमीन के अंदर 10 सें.मी. तक की गहराई में अंडे एक-एक कर देती है। अंडे से 7-10 दिनों में सफेद लट्ट निकलते हैं। ये 12 मि.मी. लंबे होते हैं। ये 8-10 सप्ताह में पूर्ण विकसित हो जाते हैं। पूर्ण विकसित सफेद लट्ट (ग्रब) अच्छी गहराई में जाकर प्यूपा में बदल जाते हैं। प्यूपा अर्द्धवृत्ताकार आकार के एवं सफेद क्रीम रंग के होते हैं। ये 15 दिनों के बाद भृंग (वयस्क कीट) में बदल जाते हैं। भृंग (वयस्क कीट) 10-20 सें.मी. तक की गहराई में रह सकता है और रात में जमीन से बाहर निकल कर पत्ते को खाता है। नवम्बर से लेकर जून तक भृंग (वयस्क कीट) जमीन के अंदर ही रहते हैं। ये पूरे वर्ष में केवल एक ही पीढ़ी पूर्ण करते हैं। ये चना के अलावा मसूर, सोयाबीन व लोबिया को ग्रसित करते हैं। इसके अलावा भिंडी, मकई एवं टमाटर इत्यादि को भी नुकसान पहुंचाते हैं।

प्रबंधन

पौढ़/भृंग नियंत्रण

भृंग रात के समय जमीन से बाहर निकलकर परपोषी वृक्षों (खेजरी, बेर व नीम

इत्यादि) पर बैठते हैं। ऐसे वृक्षों को छांट लें और दूसरे दिन कीटनाशक का छिड़काव करें।

- पौढ़/भृंग को नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस 36 घुलनशील द्रव्य या क्यूनॉलफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. की 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में या कार्बेरिल 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 4 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- आसपास के परपोषी वृक्षों पर क्लोरोपाइरिफॉस 1-1.25 लीटर प्रति 500-1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

सफेद लट्ट नियंत्रण

मूंगफली

- इसके लिए अरंडी नीम का केक 250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से मिलायें या कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत सी.जी. 33.3 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से खेतों में मिलायें।
- **बीजोपचार:** बीज को क्लोरोपाइरीफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. 2.5-12.5 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज या क्लोरोपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. या क्यूनॉलफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. 25 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

बाजरा

- प्रति कि.ग्रा. बीज में 3 कि.ग्रा. कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत या क्यूनॉलफॉस 5 प्रतिशत कण मिलाकर बुआई करें।

मिर्च/बैंगन/भिंडी

- खेतों में रोपाई से पूर्व कतारों में कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत या क्यूनॉलफॉस 5 प्रतिशत कण 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से दें। यदि दोबारा से कीट का प्रकोप हो तो 15 दिनों के अंतराल से पुन: छिड़काव करें।

गाजर

- मूंगफली, शलजम व शकरकंद के खेतों में गाजर की बुआई न करें। इससे सफेद लट्ट की समस्या बढ़ जाती है।
- जिस खेत की मृदा में सफेद लट्ट की समस्या का इतिहास हो, वहां पर गाजर की बुआई न करें।
- सफेद लट्ट की समस्या होने पर क्यूनॉलफॉस 5 प्रतिशत या कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत प्रति हैक्टर की दर से बीजाई पूर्व खेत में डालें।
- खड़ी फसलों में सफेद लट्ट नियंत्रण के लिए क्लोरोपाइरिफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. 4 लीटर प्रति हैक्टर की दर से सिंचाई के पानी के साथ दें।

रूट बग

यह कीट मुख्य रूप से बाजरा की जड़ को ग्रसित कर फसल को नुकसान पहुंचाता है। इसके अधिक संक्रमण से पौधे मर जाते हैं। इस कीट से बचाव के लिए कीटनाशक का प्रयोग करें।

प्रबंधन

- इस कीट से बचाव के लिए क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण प्रति हैक्टर की दर से बुआई पूर्व खेत में अंतिम जुताई के समय मिलायें।

दीमक

यह कीट खरीफ फसलों मूंगफली, बाजरा एवं ग्वार की जड़ों को खाकर नुकसान पहुंचाता है।

प्रबंधन

- इसके लिए अरंडी या नीम का केक 250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से खेतों में मिलायें।
- रबी फसलों की कटाई के बाद खेत की गहरी जुताई करें।
- अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद ही खेत में डालें।
- कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत सी.जी. 33.3 कि.ग्रा. या क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण भूमि में अंतिम जुताई के समय मिलायें।
- **बीजोपचार:** मूंगफली की बुआई से पूर्व इमिडाक्लोपरिड 17.8 प्रतिशत 2 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

फड़का

यह कीट कपास में अंकुरण के समय क्षति पहुंचाता है। इसके वयस्क व शिशु कीट दोनों ही अंकुरित कपास के पौधे को काटकर उसके पत्ते को खाते हैं। कपास के अलावा यह गन्ना, खरीफ चारा फसलों एवं बरसीम को भी ग्रसित करता है।

प्रबंधन

- फेनवेलरेट 0.4 प्रतिशत 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से खेत में भुरकें।

कटवर्म या कातरा

यह बहुभक्षी भूमिगत कीट है, जो कि पौधे को जमीन की सतह से काटकर नष्ट कर देता है। इससे पौधे का शत-प्रतिशत नुकसान हो जाता है। यह फसल की शुरुआती अवस्था में ज्यादा सक्रिय होता है।

प्रबंधन

- तम्बाकू व मकई के खेतों में गाजर की बुआई करने से बचें, क्योंकि इसके फसल अवशेष धीरे-धीरे नष्ट होने के कारण कटवर्म व वायर वर्म की आशंका अधिक हो जाती है।

वायर वर्म

वायर वर्म से प्रभावित क्षेत्रों में बीजों को क्यूनॉलफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. 10 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

जड़ गांठ नेमाटोड

जड़ गांठ नेमाटोड छोटी मछली की तरह कीट हैं, जो कि मृदा में रहते हैं और पौधे की जड़ों को ग्रसित कर नुकसान पहुंचाते हैं। इनके संक्रमण से गाजर की जड़ विरूपित हो जाती है व इसका विकास रुक जाता है, जिससे कि गाजर गैर ब्रिकी योग्य हो जाती है। नेमाटोड के संक्रमण से दूसरे रोग उत्पन्न करने वाले कारक जैसे कि फ्यूजेरियम, पिथियम व जीवाणु इरिविनिया आदि गाजर जड़ को संक्रमण करने में सहायक साबित होते हैं। मृदा की जांच द्वारा नेमाटोड की संख्या व प्रकार के बारे में पता लगाया जा सकता है। अपने खेतों में नेमाटोड की संख्या व प्रकार के बारे में पता लगाने का सही समय जुलाई, अगस्त या सितंबर महीना है। यह वर्तमान फसल पर निर्भर करता है। ग्रसित फसलों के खेतों में नेमाटोड की अधिकतम संख्या फसल परिपक्वता के समय रहती है।

प्रबंधन

- ग्रसित जड़ों को जहां तक हो सके जमीन से निकाल कर जला दें।
- गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें और कड़ी धूप में सूखने के लिए खुला छोड़ दें।
- नीम की खली 6-7 कि.ग्रा. अथवा 6-7 क्विंटल प्रति बीघा की दर से प्रयोग करने पर भी इस रोग से बचा जा सकता है।
- नेमाटोड के नियंत्रण के लिए एल्डीकार्ब या कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत सी.जी. प्रति बीघा की दर से बीजाई के 1 सप्ताह पूर्व खेत में डालें। ■

मई के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, विनोद कुमार सिंह, कपिला शेखावत, प्रवीण कुमार उपाध्याय और **एस.एस. राठौर**
सस्य विज्ञान संभाग,भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012

" मई में सिंचित क्षेत्रों में जायद की फसलें उगाई जाती हैं जबकि बरानी क्षेत्रों में आने वाले बरसात के मौसम के लिए सफल और अधिक उत्पादन को सुरक्षित करने के लिए तैयारी शुरू की जाती है। इस समय तक अधिकांश क्षेत्रों में गर्मी के मौसम में बोई जाने वाली फसलों की बुआई हो चुकी होती है। कुछ क्षेत्रों में अल्पावधि जैसे कद्दूवर्गीय और चारे वाली फसलों की बुआई की जानी है। समय पर बोई गयी फसलें जैसे लौकी, तोरई, टिंडा, तरबूज, खरबूजा, भिंडी एवं कपास आदि पौध अवस्था में हैं। अधिक फसल उत्पादन के लिए इन फसलों को जैविक और अजैविक तनावों, विशेष रूप से नमी की कमी से बचाना बेहद जरुरी होता है। मृदा में नमी की उपलब्धा सुनिश्चित करने के साथ-साथ सिंचाई जल की उपयोग दक्षता पर भी ध्यान देने की आवश्यकता होती है। "

धान्य वाली फसलों/बीजों का भंडारण

गर्मी के मौसम में सिंचाई जल की उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए उपयुक्त सिंचाई विधि और समय के चुनाव पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। उपलब्ध भूमि एवं जलवायु तथा संसाधनों के अनुसार फसलों की प्रमाणित प्रजातियों का चयन, सही समय पर उपयुक्त विधि से बुआई, मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन, फसल की क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई, खरपतवार, कीट व रोग नियंत्रण के आवश्यक उपाय तथा विपणन बेहद जरूरी है। इसके साथ-साथ रबी फसलों की कटाई-मड़ाई, गहाई इस समय तक पूर्ण हो जाती है। इन फसलों का सुरक्षित भंडारण भी एक चुनौती होती है। अनाज के साथ-साथ भूसा भी एक बहुमूल्य उत्पाद है। अत: उसका भंडारण भी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। रबी फसलों के उत्पादों को वैज्ञानिक तरीके से सुरक्षित रखना ज्यादा महत्वपूर्ण है। इस समय खाली खेतों में ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई और मृदा सौरीकरण का भी एक विशेष महत्व होता है। मई में किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का विवरण निम्न है:

गेहूं एवं जौ की फसल कटाई उपरांत प्रबंधन

- अधिकांश किसान गेहूं की कटाई दरांती से करते हैं, जिसमें सतह से 3-6 सें.मी. ऊपर से कटाई की जाती है। कटाई का समय और विधि, कुल फसल उत्पादन का प्रमुख कारक है। किसान कटे हुए गेहूं के पौधों को छोटे-छोटे बंडलों में बांधकर खेत में 2-3 दिनों तक सूखने के लिए छोड़ देते हैं। इसके विपरीत मशीन अथवा कम्बाईन द्वारा कटाई करने से नमी वाले दानों को सुखाने का समय नहीं मिलता है। कटाई का उचित समय एक महत्वपूर्ण कारक है। अत: उचित परिपक्वता अवधि का ध्यान रखना चाहिए। इससे दानों को झड़ने अथवा गिरने से बचाया जा सकता है। विभिन्न प्रजातियों को अलग-अलग हिस्सों में रखना चाहिए। इससे प्रजातियों की शुद्धता बनी रहती है। फसल को सीधे धूप में सुखाने से भी बचना चाहिए। दानों को साफ बोरों में भरना चाहिए। इससे भंडारण और परिवहन की हानि को रोका जा सकता है। कटाई के उपरांत दानों को तुरंत सुखाना, एक समान शुष्कता, उचित मड़ाई, साफ-सफाई, साफ बोरों का उपयोग, वैज्ञानिक तरीके से नमी और कीट प्रबंधन, समुचित हवा का प्रबंधन और ढेरियों को समयबद्ध चरणों में हिलाना चाहिए। इन सब तरीकों को अपनाकर प्रक्षेत्र और बाजार स्तर पर होने वाली हानि को कम किया जा सकता है।
- वैज्ञानिक तरीके से बीज भंडारण करने पर कीट और रोगों का प्रकोप कम होता है, जिससे बीज लंबे समय तक स्वस्थ और सुरक्षित रहता है। बीज को भंडारण से पहले ठीक प्रकार से सुखा लेना चाहिए। भंडारण में विभिन्न प्रकार

के कीटों का प्रकोप होता है। नमी की अधिकता से कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है। भंडारण के लिए धान्य वाली फसलों में नमी की मात्रा 8-10 प्रतिशत और दलहनी एवं तिलहनी फसलों में 6-8 प्रतिशत तक नमी होने पर ही भंडारण करना चाहिए। ऐसा पाया गया है भंडारण के समय धान्य वाली फसलों के बीजों में 10-12 प्रतिशत से अधिक नमी होने पर कीट-मकोड़ों का प्रकोप, 14-15 प्रतिशत से अधिक होने पर फफूंदीजनित रोग और 15 प्रतिशत से अधिक नमी होने पर अच्छी तरह अंकुरण नहीं हो पाता है।

- सबसे पहले भंडारगृह वाली जगह पर अच्छी प्रकार से साफ-सफाई करनी चाहिए। पुराने अवशेषों, मकड़ी के जालों को निकालकर साफ कर देना चाहिए एवं दीवारों या फर्श पर पड़ी दरारों को सीमेंट से बंद कर देना चाहिए। कीटों से बचाव के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. मात्रा को 100 लीटर पानी में घोलकर भंडारणगृह में अच्छी तरह से छिड़काव करें। इस कमरे को कम से कम एक सप्ताह तक बंद रखने पर इसमें छिपे हुए कीट-मकोड़े आदि मर जाते हैं। यदि कीटों का छिड़काव से नियंत्रण न किया जा सके और दो कीट प्रति कि.ग्रा. बीज या अनाज में उपस्थित हों तो धुआं देने वाले विषैले रसायन से कीट मर जाते हैं। इनके धुएं में विषैली गैसें निकलती हैं। प्राय: एल्युमिनियम फॉस्फेट की 2 गोली/टन की दर से विभिन्न ऊंचाई पर रख दी जाती है। छल्ली को गैस अवरोधी चादर से ढक दिया जाता है। गोलियों से हवा की नमी शोषित होती है और फॉस्फिन गैस निकलती है, जो कीटों को मार देती है। मिथाइल ब्रोमाइड का प्रयोग करना हो तो ढेर में 3 से 5 मि.ली. मिथाइल ब्रोमाइड प्रति 100 कि.ग्रा. अनाज रखने के बाद बर्तन बंद कर दिया जाता है और बर्तन में गैस निकलने से कीट मर जाते हैं। यदि अनाज को नीम के बीज के पाउडर के साथ मिलाकर रखें तो कीटों का प्रकोप नहीं होगा।
- गोदाम में बीज भंडारण के लिए हमेशा एक लकड़ी का प्लेटफार्म बनायें जो कि करीब एक फुट फर्श से ऊंचा हो, साथ ही दीवारों से भी लगभग एक फुट की दूरी पर हो। बोरों को गोदाम की दीवारों से सटाकर कभी भी नहीं रखना चाहिए। भंडारण प्राय: जूट के बोरों में करना चाहिए, नए बोरों का प्रयोग करें तो ज्यादा अच्छा है। पुराने बोरे होने पर उनको अच्छी तरह सुखाना चाहिए और 3-4 दिनों तक तेज धूप में सूखने देना चाहिए। पुराने बोरों को उपयोग में लेने के लिए उन्हें या तो गरम पानी से धो लें या फिर 0.1 प्रतिशत मैलाथियान घोल में 15-20 मिनट तक डुबोकर रखिये। फिर उसे अच्छी तरह धूप में सुखाकर उपयोग करना चाहिए।

धान की नर्सरी में देखभाल

- बीज का चुनाव सावधानीपूर्वक करें। इसके लिए आधारित व प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करें, जिसमें पूर्ण जमाव, किस्म की शुद्धता एवं स्वस्थ होने की प्रमाणिकता होती है। धान की नर्सरी के लिए मध्यम आकार की प्रजातियों के लिए 40 कि.ग्रा., मोटे धान के लिए 45 कि.ग्रा. तथा बासमती प्रजातियों के लिए 20-25 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त होता है। धान के बीज का बोने से पूर्व 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा या 2.5 ग्राम कार्बेन्डाजिम या थीरम से बीजोपचार कर लेना चाहिए। जहां पर जीवाणु झुलसा या जीवाणुधारी रोग की समस्या हो, वहां पर 25 कि.ग्रा. बीज के लिए 4 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन या 40 ग्राम प्लान्टोमाइसीन को मिलाकर पानी में रात भर भिगो दें तथा 24-36 घंटे तक जमाव होने दें। बीच-बीच में पानी का छिड़काव करते रहें तथा दूसरे दिन छाया में सुखाकर नर्सरी में डाल दें।

- धान की पौध तैयार करने के लिए 8 मीटर लंबी एवं 1.5 मीटर चौड़ी क्यारियां बना लेते हैं। जब तक नव पौध हरी न हो जाए, पक्षियों से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए विशेष सावधानी बरती जाए तथा शुरू के 2-3 दिनों तक अंकुरित बीजों को पुआल से ढके रहें। इसके बाद पानी की पतली सतह के साथ संतृप्त से गारे वाली स्थिति बनाए रखने के लिए नर्सरी क्यारियों के ऊपर अंकुरित बीजों का समान रूप से छिड़काव करें।
- स्वस्थ एवं रोगमुक्त पौध तैयार करने के लिए उचित जल-निकास एवं उच्च पोषक तत्वों से मुक्त दोमट मिट्टी और सिंचाई के स्रोत के पास पौधशाला का चयन करें।

बुआई के एक महीने पहले नर्सरी की तैयारी की जाती है। नर्सरी क्षेत्र में 15 दिनों के अंतराल पर पानी देकर खरपतवारों को उगने दिया जाए तथा हल चलाकर या अवरणात्मक खरपतवारनाशी जैसे कि पैराक्वाट या ग्लाईफोसेट का 1 कि.ग्रा./हैक्टर स्प्रे करके खरपतवारों को नष्ट कर दें। ऐसा करने से धान की मुख्य फसल में भी खरपतवारों की कमी आयेगी। नर्सरी क्षेत्र को गर्मियों (मई-जून) में अच्छी तरह 3-4 बार हल से जुताई करके खेत को खाली छोड़ने से मृदा संबंधित रोगों में काफी कमी आती है।

- बुआई के 1-2 दिन बाद पायराजोसल्फ्यूरॉन 250 ग्राम प्रति हैक्टर की दर से पौध निकलने के पूर्व छिड़काव करें। इसके लिए शाकनाशी को रेत में (10-15 कि.ग्रा./1000 मीटर) मिलाकर उसे नर्सरी क्यारियों पर एक समान रूप से फैला दें। हल्का पानी (1-2 सें.मी.) क्यारियों में भरा रहने दें, जिससे खरपतवारनाशी एक समान क्यारियों में फैल जायें।

ग्रीष्मकालीन मूंग, उड़द और लोबिया

- इस समय मूंग, उड़द और लोबिया की फसल अपनी बढ़वार की अवस्था में होगी। अधिकतर जगह मार्च के आखिर या अप्रैल के प्रथम सप्ताह में बुआई हो चुकी होगी। अत: सिंचाई 10-15 दिनों के अंतराल पर आवश्यकतानुसार व हल्की करें।
- बुआई के प्रारंभिक 4-5 सप्ताह तक खरपतवार की समस्या अधिक रहती है। पहली सिंचाई के बाद निराई करने से खरपतवार नष्ट होने के साथ-साथ भूमि में वायु का संचार भी होता है, जो मूल ग्रन्थियों में क्रियाशील जीवाणुओं द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन एकत्रित करने में सहायक होता है। अत: बुआई के 15-20 दिनों के अंदर कसोले से निराई-गुड़ाई कर खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए।
- **पीत या पीला चितेरी रोग:** उड़द एवं मूंग में प्राय: पीली चितेरी रोग का प्रकोप होता है। सर्वप्रथम कोमल पत्तियों पर पीले तथा हरे धब्बों का दृष्टिगोचर होना इस रोग का प्रमुख लक्षण है। जैसे-जैसे रोग की अवस्था बढ़ती है, पीले क्षेत्र का आकार बढ़ता जाता है तथा अंत में सभी फलियां भी पीली हो जाती हैं। उनका आकार छोटा हो जाता है। इसके साथ ही दानों का आकर भी छोटा हो जाता है। खेत में यह रोग श्वेत मक्खी (बेमीसिया तबाकी) द्वारा संवाहित होता है। 1) पीली चितेरी रोग के नियंत्रण के लिए उड़द रोगरोधी प्रजातियां ही उगायें जैसे-के.यू. 300, यू.जी. 218, आई. पी.यू.-94-1 (उत्तरा), पंत उड़द-19

ग्रीष्मकालीन मूंग-सम्राट

एवं नरेन्द्र उड़द-1 तथा मूंग में सम्राट (पी.डी.एम. 139) मेहा, एच.यू. एम-16, एम.एस 2-15, गंगा-8, पंत मूंग-4 एवं नरेन्द्र मूंग-1 इत्यादि उगानी चाहिए। 2) बुआई के समय कीटनाशी डाइसल्फोयान या फोरेट 1 कि.ग्रा. सक्रिय अवयव प्रति हैक्टर की दर से भूमि में प्रयोग करना चाहिए। इससे अन्य कीटों से भी फसल की सुरक्षा हो जाती है।

- **चूर्णी कवक:** इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों तथा दूसरे भागों पर सफेद चूर्णिल धब्बे पड़ जाते हैं, जो बाद में मटमैले रंग के हो जाते हैं। रोग के अधिक बढ़ने की अवस्था में पत्तियां अपरिपक्व अवस्था में सिकुड़कर गिर जाती हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए उड़द की एल.बी.जी. 402 एवं एल.बी. जी. 17 तथा मूंग की रोगरोधी प्रजातियां पूसा 9072, टार्म-1, सी.ओ.जी.जी.-4 तथा पूसा 105 इत्यादि प्रजातियां उगाना लाभदायक रहता है। 2) घुलनशील गंधक (0.3 प्रतिशत) या कैराथेन (0.1 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत) का 7-10 दिनों अंतराल पर 2 से 3 छिड़काव करें।

लोबिया

- **सरकोस्पोरा पर्ण बुदंगी रोग:** पत्तियों पर सिलेटी से भूरे कोणीय धब्बे पड़ जाते हैं। इन धब्बों के चारों तरफ लाल रंग की किनारी बन जाती है। ये इस रोग के विशिष्ट लक्षण हैं। गम्भीर अवस्था में फलियां बनते समय संक्रमित पत्तियां सड़ जाती हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए बुआई से पहले बीज का कैप्टॉन या थिरम कवकनाशी से 2-3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करना चाहिए। या कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत) या मेन्कोजेब 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।
- **रूक्ष रोग:** इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों तथा फलियों पर भूरे गोल धंसे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। इन धब्बों का केन्द्र गहरे रंग का और बाहरी सतह चमकीली लाल रंग की होती है। संक्रमण बढ़ने पर पौधे के रोगग्रसित भाग जल्दी सूख जाते हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए 1)बुआई से पहले बीज को थिरम कवकनाशी या कैप्टॉन से 2-3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करना चाहिए। 2) इंडोफिल जेड-78 या थिरम कवकनाशी 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर रोग के लक्षण दिखाई देने पर छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार 1 से 2 छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करना चाहिए।
- **झुर्रीदार पत्ती रोग:** इस रोग के विशिष्ट लक्षण पत्तियों की सामान्य से अधिक वृद्धि तथा बाद में इनमें सिलवटें या मरोड़ होता है। ये पत्तियां छूने पर सामान्य पत्ती से अधिक मोटी तथा खुरदरी प्रतीत होती हैं। इसके नियंत्रण के लिए 1) रोगरोधी प्रजातियां ही उगाएं। 2) रोगी पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। 3) इसकी रोकथाम के लिए डाईमिथोएट 30 ई.सी. का छिड़काव करने से लाभ होता है।
- **प्रमुख कीट एवं उनकी रोकथाम:** उड़द-मूंग पर पाये जाने वाले हानिकारक कीटों की समस्या विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न होती है। फसल की अवस्था, तापमान, नमी, सूर्य के प्रकाश तथा वर्षा पर निर्भर करती है। इन कीटों को हानि के प्रकार के आधार पर या फसल में लगने वाले कीटों में तना मक्खी, सफेद मक्खी, हरा फुदका

उड़द का पीला चित्तवर्ण रोग

- पत्तियों पर पीले सुनहरे चकत्ते पड़ जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में सम्पूर्ण पत्ती पीली पड़ जाती है एवं यह रोग सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है। इसके नियंत्रण के लिए डाइमिथोएट (30 ई.सी.) एक लीटर प्रति हैक्टर का छिड़काव करना चाहिए या मिथाइल-ओडिमेटान (25 ई.सी.) 1.0 लीटर प्रति हैक्टर का छिड़काव करना चाहिए।

उड़द-1

- **उड़द का पत्ता दाग रोग:** इस रोग में पत्तियों पर गोलाई लिए भूरे रंग के कोणीय धब्बे बनते हैं। इसके बीच का भाग राख या हल्का भूरा तथा किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है। इसके नियंत्रण के लिए 1) 3 कि.ग्रा. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति हैक्टर 10 दिनों के अंतराल पर 2 से 3 छिड़काव 500 ग्राम का पर्याप्त होगा। 2) गर्मी में गहरी जुताई करें व रोगरोधी प्रजातियों को उगायें। 3) बीज शोधन एवं बीजोपचार किसान भाई अवश्य करें।

(लीफ हॉपर या जैसिड), माहूं, पत्ती छेदक भृंग (गेलूरूसिड बीटिल) पर्ण जीवक (थ्रिप्स), चना फलीभेदक एवं मटर फलीभेदक आदि प्रमुख हैं।

- तना मक्खी के नियंत्रण हेतु इंडसिस्टोन या फोरेट से बीजोपचार करके 2-4 सप्ताह तक फसल को सुरक्षित रखा जा सकता है। बुआई के समय एल्डीकार्ब 10 जी एवं फोरेट 10 जी 1.6 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हैक्टर का प्रयोग करना अधिक लाभदायक होता है। मोनोक्रोटोफॉस 40 ई.सी. 624 मि.ली./हैक्टर या ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 25 ई.सी. 750 मि.ली./हैक्टर की दर से छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करना चाहिए।
- सफेद मक्खी के प्रभावी नियंत्रण के लिए ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 0.1 प्रतिशत या डाइमेथोएट 0.3 प्रतिशत/हैक्टर 650-700 लीटर पानी में मिलाकर 3-4 छिड़काव करना चाहिए। इमिडाक्लोरोपिड 0.5 मि.ली./लीटर पानी (500 लीटर/हैक्टर) की दर से छिड़काव बुआई के 10-15 दिनों बाद अवश्य करें।
- जैसिड के नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस फिनिट्रोथियान, क्लोरफेनविन्फास,

चना, मटर और मसूर की फसल में कटाई उपरांत प्रबंधन

- चना, मटर एवं मसूर की फसल की कटाई विभिन्न क्षेत्रों में जलवायु, तापमान, आर्द्रता एवं दानों में नमी के अनुसार विभिन्न समय पर होती है। फली से दाना निकालकर दांत से काटा जाए और कट्ट की आवाज आए, तब समझना चाहिए कि चने की फसल कटाई के लिए तैयार है। चने के पौधों की पत्तियां हल्की पीली अथवा हल्की भूरी हो जाती हैं या झड़ जाती हैं, तब फसल की कटाई करनी चाहिए। फसल के अधिक पककर सूख जाने से कटाई के समय फलियां टूटकर खेत में गिरने लगती हैं, जिससे काफी नुकसान होता है। समय से पहले कटाई करने से अधिक आर्द्रता की स्थिति में अंकुरण क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। काटी गयी फसल को एक स्थान पर इकट्ठा करके खलिहान में 4-5 दिनों तक सुखाकर मड़ाई की जाती है। मड़ाई बैलों से या थ्रेसर से या ट्रैक्टर को पौधों के ऊपर चलाकर की जाती है। टूटे-फूटे, सिकुड़े दाने वाले रोगग्रसित बीज व खरपतवार भूसे और दानों को पंखों या प्राकृतिक हवा से अलग कर बोरों में भरकर रखें। भंडारण से पूर्व बीजों को फैलाकर सुखाना चाहिए। भंडारण के लिए दानों में नमी का स्तर लगभग 10-12 प्रतिशत या इससे भी कम हो।

धान्य वाली फसलों/बीजों का भंडारण

- मटर की फसल सामान्यत: 130-150 दिनों में पकती है। इसकी कटाई दरांती से करनी चाहिए। 5-7 दिनों धूप में सुखाने के बाद बैलों से मड़ाई करनी चाहिए। साफ दानों को 3-4 दिनों धूप में सुखाकर उनको भंडारण पात्रों में करना चाहिए। भंडारण के दौरान कीटों से सुरक्षा के लिए एल्युमिनियम फॉस्फाइड का उपयोग करें। चना, मटर एवं मसूर में भंडारण के दौरान मुख्य रूप से घुन कीट के द्वारा सबसे अधिक नुकसान होता है। ज्यादातर दलहनी फसलों में घुन का प्रकोप खेत में फलियां पकते ही शुरु हो जाता है, जो कटाई उपरान्त दानों का उचित उपचार नहीं होने पर भंडारण में निरंतर बढ़ता ही जाता है। चने में घुन का संक्रमण भंडारण से शुरु होता है। सुरक्षित भंडारण के लिए निम्न उपाय अपनाने की संतुति की जाती है:
  - वैज्ञानिक विधि द्वारा निर्मित पात्र जैसे पंतनगर कुठला, पूसा बिन, हापुणबिन आदि का प्रयोग करना चाहिए। दाने/बीज को जूट के थैलों में भरकर लकड़ी के पटरों पर रखना चाहिए।
  - चना, मटर एवं मसूर की दानों/दालों पर सरसों, मूंगफली, सोयाबीन, तिल, नारियल का तेल लगभग 6-7 मि.ली. एवं हल्दी पाउडर 2 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से अच्छी तरह से उपचारित कर स्टील के बर्तन में भंडारित कर सकते हैं।

मैलाथियान, डाइमेथोएट का क्रमश: 0.075 प्रतिशत, 0.05 प्रतिशत व 0.03 प्रतिशत या इमिडाक्लोरोपिड 0.5 मि.ली./लीटर पानी (500 लीटर/हैक्टर) की दर से छिड़काव बुआई के 10-15 दिनों बाद लाभदायक पाया गया है। साथ ही बुआई के समय में भी परिवर्तन करके नियंत्रण किया जा सकता है।

- माहूं के नियंत्रण हेतु फेनवलेरेट, साइपमेरेंथ्रिन एवं डेकामिथ्रिन आदि काफी प्रभावी पाया गया है। बुआई के समय डाइसल्फोटोन ग्रेन्यूल 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हैक्टर के प्रयोग करने से लगभग पांच सप्ताह तक माहूं का नियंत्रण आसानी से हो जाता है।
- पत्ती छेदक भृंग के प्रभावी नियंत्रण के लिए डाइसल्फोटोन 5 जी 1.5 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से बुआई के समय प्रयोग करने से लाभ होता है।
- पर्ण जीवक की रोकथाम करने के लिए कीटनाशी जैसे कार्बोफ्यूरॉन 3 जी या फोरेट 10 जी 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हैक्टर की दर से मिट्टी में बुआई के समय डालना अधिक उपयोगी हुआ है। इसी तरह साइपरमेथ्रिन 0.1 प्रतिशत या फ्लूवैलिनेट 0.075 प्रतिशत या फेनवलरेट 0.1 प्रतिशत से भी खरीफ की फसल में पर्ण जीवक से छुटकारा पाया जा सकता है। 0.03 प्रतिशत डाइमेथोयट अथवा 0.03 प्रतिशत मिथाइल ओडिमेटान का प्रयोग भी अधिक प्रभावी पाया गया है। इसके साथ ही किसान गर्मी में खेत की गहरी जुताई अवश्य करें।
- चना फलीभेदक के नियंत्रण के लिए सबसे पहले यौन आकर्षण जाल (फेरोमैन ट्रैप) के द्वारा नियमित निगरानी करते रहें। जैसे ही 5-6 नर कीट/ट्रैप 24 घंटे के अंदर मिलना शुरू हो जाये, नियंत्रण तकनीक अपनायें। एन.पी.वी. 250 लार्वा तुल्य का छिड़काव करें एवं परभक्षियों के लिए खेत में टी आकार की लकड़ी लगा दें। उसके साथ ही नीम की निबौली के सत का 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव लाभदायक सिद्ध हुआ है। मटर फलीछेदक के लिए मिथाइल डिमेटान 0.05 प्रतिशत का प्रयोग काफी प्रभावी पाया गया है।
- **कटाई एवं मड़ाई:** जब 80 प्रतिशत से अधिक फलियां पक जाएं तो हंसियां की सहायता से कटाई कर लेनी चाहिए। ज्यादा विलंब या देर से कटाई करने पर फलियों से दाने चिटकने का अंदेशा रहता है। उड़द एवं मूंग की नई प्रजातियां ज्यादातर एक साथ पक जाती हैं, जिससे सम्पूर्ण फसल की कटाई एक साथ की जा सकती है। कटाई उपरान्त फसल को 3-6 दिनों तक अच्छी तरह सुखाकर मड़ाई करनी चाहिए। बीजों को तब तक धूप में सुखाना चाहिए, जब तक उसमें नमी 10-12 प्रतिशत के बीच न हो।

मूंगफली की फसल में सस्य प्रबंधन

- सिंचित क्षेत्रों में जायद मूंगफली की बुआई मई के पहले सप्ताह तक कर सकते हैं। इसके लिए मूंगफली-गेहूं फसलचक्र अपनाया जा सकता है, परंतु एक ही भूमि पर हर वर्ष मूंगफली न उगायें। इससे भूमि से कई रोग पैदा हो जाते हैं। जायद मूंगफली की उन्नत किस्में एम 522, एम 335, एचबी 84 सिंचित क्षेत्रों में तथा एम 37 बारानी क्षेत्रों में जहां वर्षा अच्छी हो वहां लगाई जा सकती है।
- उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना लाभदायक रहता है। अधिक उत्पादन लेने के लिए सिंचित क्षेत्रों में उर्वरकों का प्रयोग 25-30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50-60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा.

ग्रीष्मकालीन सूरजमुखी

- सूरजमुखी की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई एवं निराई-गुड़ाई करें तथा पौधों पर मिट्टी चढ़ायें। जायद में बोयी गई सूरजमुखी की फसल में तीन सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई बुआई के 30-35 दिनों बाद करें। इसी अवस्था में नाइट्रोजन की 1/3 मात्रा का उपयोग करें। द्वितीय सिंचाई 20-25 दिनों के बाद फूल आने की अवस्था में करें एवं अंतिम सिंचाई बीज बनने की अवस्था में करें। फूल आने के समय मधुमक्खियां प्राकृतिक रूप से बहुत सक्रिय होती हैं व परागण में बहुत सहायक होती हैं। इससे पूरे फल में दाना भरता है व पैदावार में वृद्धि तथा बीजों से अधिक तेल प्राप्त होता है।

- जायद में बोई गई सूरजमुखी की फसल में पत्ती खाने वाले कीट (लीफ हॉपर) के लिए मोनोक्रोटोफॉस 0.05 प्रतिशत या डाइमेथोएट 0.03 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। रस-चूसक कीट, एफिड्स, जैसिड आदि की रोकथाम के लिए इमिडाक्लोरोपिड 125 ग्राम/हैक्टर या एसिटामिप्रिड 125 ग्राम/हैक्टर की दर से छिड़काव करें। सूरजमुखी की फसल में रतुआ, डाउनी मिल्ड्यू, हेड रॉट, राइजोपस हेड रॉट जैसी रोगों से समस्याएं आती हैं। पत्ती झुलसा रोग के नियंत्रण हेतु मैन्कोजेब 3 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। पुष्पन की अवस्था पर 2 प्रतिशत बोरेक्स और 1 प्रतिशत जिंक सल्फेट के छिड़काव से दाने भरे हुए, मोटे और तेल उपज में वृद्धि होती है।

ग्रीष्मकालीन मूंगफली

पोटाश जबकि बारानी क्षेत्रों में 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20-30 कि.ग्रा. पोटाश/हैक्टर संस्तुत की गयी है। अधिक उपज लेने के लिए बुआई के समय 250 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से जिप्सम का प्रयोग करना चाहिए। यदि किसी कारण से बुआई के समय जिप्सम को मृदा में नहीं डाला गया है, तो जब फसल 40-45 दिनों की हो जाये तब पौधों की जड़ों में डालना चाहिए। मृदा में बुआई से पहले 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट/हैक्टर या जैविक खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। यदि खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 0.25 प्रतिशत बुझे हुए चूने (200 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट तथा 0.5 कि.ग्रा. बुझे हुए चूने) का घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव का प्रयोग करना चाहिए। लोहे की कमी वाले क्षेत्रों में फसल में जैसे ही इसकी कमी के लक्ष्ण दिखाई दें तो 1 प्रतिशत फेरस सल्फेट (1 लीटर पानी में 10 ग्राम फेरस सल्फेट) का पर्णीय छिड़काव करें। बोरॉन की कमी वाली भूमि में बोरेक्स 10 कि.ग्रा./हैक्टर या जिप्सम के साथ खड़ी फसल में 40-45 दिनों की अवस्था में दें।

- मूंगफली की फसल में खरपतवारों के द्वारा लगभग 40-45 प्रतिशत तक की उपज में कमी आ जाती है। मूंगफली की फसल शुरूआती 30-35 दिनों की अवस्था में खरपतवारों के प्रति संवेदनशील होती है। खरपतवार निकालने के लिए 3 सप्ताह बाद निराई-गुड़ाई करना लाभदायक रहता है। इसमें पहली निराई-गुड़ाई, बुआई के 20-25 दिनों बाद एवं दूसरी निराई-गुड़ाई बुआई के 35-40 दिनों बाद करनी चाहिए। मूंगफली की फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए बासालिन (फ्लूक्लोरालिन) या ट्रेफ्लॉन की 0.75-1.0 कि.ग्रा./हैक्टर सक्रिय तत्व की मात्रा बुआई से पहले मिट्टी में मिला दें। बुआई से पहले खरपतवारनाशी का प्रयोग नहीं किया गया हो तो बुआई से 1-3 दिनों के अंदर लासो की 1.5-2.0 कि.ग्रा./हैक्टर या पेन्डीमिथेलिन की 1.0-1.25 कि.ग्रा./हैक्टर सक्रिय तत्व की मात्रा को छिड़काव द्वारा अच्छी तरह मिट्टी में मिलाएं। खड़ी फसल में चौड़ी पत्ती एवं घास वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए इमेजेथाफायर (10 प्रतिशत एस एल) की 75-100 ग्राम/हैक्टर सक्रिय तत्व की मात्रा बुआई के 20-25 दिनों पर छिड़काव अवश्य करें।
- बुआई के बाद 15-20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। सिंचाई करते समय इस बात का ध्यान रहे कि खेत में पानी जमा नहीं होना चाहिए। जिन खेतों में पानी भराव की समस्या हो, वहां पर जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- चेंपा, जो कि पौधों से रस चूसते हैं, का प्रकोप हो तो उसके नियंत्रण के लिए 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव करें। रोगों की रोकथाम के लिए फफूंदीनाशक जैसे बाविस्टिन या थीरम नामक दवा से बीजोपचार ही सबसे सर्वोत्तम तरीका है।

गन्ने की फसल में देखभाल

- गन्ना की सी.ओ.एच.-37 किस्म मई के पहले सप्ताह तक लगा सकते हैं। यह किस्म तेजी से बढ़ने वाली है, जिसका गन्ना मोटा, नरम व रसीला होता है। यह कमजोर मिट्टी पर तथा सिफारिश की गई नाइट्रोजन की आधी मात्रा से 320 क्विंटल पैदावार तथा 18-20 प्रतिशत खांड देती है। इसके गन्ने अधिक बढ़ने पर गिर जाते हैं इसलिए इसे दवि-पंक्ति विधि से बोना, मिट्टी चढ़ाना व बांधना बहुत जरूरी है। बीजाई के 6 सप्ताह बाद पहली सिंचाई दें तथा शदरकालीन, बसंतकालीन व मोढ़ी फसल की मई में 10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें। सी.ओ.जे.-64 को अधिक सिंचाई की जरूरत होती है। सी.ओ.-1148 व सी.ओ.एस.-767 किस्में सूखे को काफी सहन कर लेती हैं। मई में गन्ने पर हल्की मिट्टी चढ़ा दें, इससे खरपतवार नियंत्रण तो होता ही है, फसल भी गिरने से बच जाती है।
- मई में ग्रीष्मकालीन गन्ने की बुआई की जाती है, लेकिन इसकी पैदावार शरद व बसंतकालीन गन्ने से कम होती है। विभिन्न गन्ने की फसलों की उपयुक्तता इससे पहले ली जाने वाली फसल पर निर्भर करती है। यदि ग्रीष्मकालीन गन्ने की फसल की पैदावार बढ़ानी है, तो उपयुक्त किस्म तथा संतुलित पोषण अनिवार्य है। बुआई से पूर्व गन्ने के टुकड़ों को 24 घंटे पानी में भिगोकर रखना अंकुरण अच्छा होता है। इस समय बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. कर लें और कूंड के अंदर पेड़ों की संख्या भी बढ़ा दें। गन्ने में बुआई के लगभग 3 माह बाद 60-75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन या 130-163

गन्ना

कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की टॉप ड्रेसिंग करें। यदि गन्ना काटने के बाद गन्ने की बुआई करनी हो तो पलेवा करके गन्ना बोयें।

- इस समय गन्ने की फसल पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है, खासतौर से सिंचाई प्रबंधन पर। इस महीने में बहुत गर्मी पड़ने के साथ तेज हवाएं भी चलती हैं। मृदा में पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए हर 15-20 दिनों के अंतराल पर पानी देना चाहिए। गन्ने की पेड़ी से अच्छी उपज लेने के लिए 75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन या 163 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर पहली फसल काटने के बाद एवं इतना ही यूरिया की मात्रा दूसरी व तीसरी सिंचाई के समय या फसल काटने के 60 दिनों बाद एवं साथ ही 75 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग वांछनीय है। यदि कुछ कीटों का प्रकोप दिखे तो फोरेट 10 जी की 30 कि.ग्रा. मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।
- पानी की कमी होने पर पताई की पंक्तियों के बीच में 7-8 सें.मी. मोटी परत बिछा देनी चाहिए। ऐसा करने से पेड़ी के खेत में सिंचाई के बाद नमी बनी रहेगी, खरपतवार भी कम उगेंगे, गन्ने की पताई धीरे-धीरे सड़ती रहती हैं तथा कम्पोस्ट खाद का काम करती हैं। बावक फसल की कटाई के बाद सभी मुंड से पेड़ी का फुटाव नहीं होता, जिसके कारण खेत में जगह-जगह रिक्त स्थान बन जाते हैं। इन रिक्त स्थानों को भरने के लिए पहले से तैयार नर्सरी से पौधे उखाड़कर लगा देने चाहिए या फिर दो-आंखों वाले टुकड़ों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कर दें। इससे खेत में पौधों की संख्या अधिक रहेगी और अधिक पैदावार मिलेगी।
- गन्ने को अंकुरबेधक व दीमक से बचाने के लिए कूंड को ढकने से पहले बी.एच.सी. 20 ई.सी. दवा की 6 लीटर मात्रा का 1 लीटर पानी में घोलकर बोये गए टुकड़ों के ऊपर छिड़काव करें। अगोलाबेधक कीट की रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफॉस 40 ई.सी. की 1.5 लीटर या 30 कि.ग्रा. कार्बोफ्यूरॉन प्रति हैक्टर दवा 600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- गन्ने की फसल में कीट नियंत्रण एवं प्रबंधन के लिए बुआई के समय एक एकड़ भूमि में 2 लीटर क्लोरोपायरीफॉस को 400 लीटर पानी में घोलकर बुआई की गयी पंक्तियों में डाल दें। अप्रैल से जुलाई के बीच 400 लीटर पानी में रैनेक्सीपैर 20 एस.सी. की 150 मि.ली. मात्रा घोलकर छिड़काव करें। जून के अंत में 13 कि.ग्रा. कार्बोफ्यूरॉन को प्रति एकड़ भूमि में डाले।
- गन्ने की फसल को एक पूर्ण जीवनकाल के लिए 60 से 70 इंच पानी की आवश्यकता होती है। इसमें आधा पानी वर्षा से प्राप्त हो जाता है, सुविधानुसार 15 से 20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करने से पेड़ी फसल की अच्छी पैदावार होती है। पेड़ी फसल में काला चिकटा (ब्लेक बग) तथा गुलाबी चिकटा कीट का प्रकोप अप्रैल से मई में होता है। ये गन्ने की पत्तियों का रस चूस जाते हैं, जिससे पत्तियां पीले रंग की हो जाती हैं और पौधे धीरे-धीरे मुरझाने लगते हैं। इसके नियंत्रण के लिए रॉकेट (प्रोफोनोफोस साइपर) 400 मि.ली. प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।
- गन्ने की फसल को रोग से बचाने के लिए रोगरोधी प्रजातियों की बुआई करें। स्वस्थ बीज एवं समन्वित रोग प्रबंधन द्वारा रोगों से बचाव संभव है तथा अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। रोगग्रस्त गन्ने को खेत से निकालकर 0.1 प्रतिशत कार्बेंडाजिम का छिड़काव करें।

कपास की बुआई

- पंजाब, हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश में इसकी बुआई आमतौर पर गेहूं की कटाई के बाद अप्रैल-मई में की जाती है। अप्रैल-मई में बुआई करना अधिक लाभकर रहता है। कपास की बुआई के लिए बीज को पंक्तियों में बोना सदैव अच्छा रहता है। पंक्तियों में बुआई के लिए सीड ड्रिल या देसी हल के पीछे कूंड में बीज बोया जाता है। अमेरिकन, देसी और संकर कपास की क्रमशः 15-20, 15-16 और 2-2.5 कि.ग्रा./हैक्टर बीज पर्याप्त होता है। देसी कपास अथवा अमेरिकन कपास के लिए 60×30 सें.मी. तथा संकर किस्मों के लिए 90×60 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति और पौधे से पौधे की दूरी रखनी चाहिए।
- सिंचित क्षेत्रों के लिए फसलचक्र जैसे कपास-सूरजमुखी, कपास-मूंगफली, कपास-बरसीम/सेंजी/जई, कपास-गेहूं/जौ, कपास-बरसीम/सेंजी/जई आदि। उत्तर भारत में कपास-मटर, कपास-ज्वार और कपास-गेहूं तथा दक्षिणी भारत में कपास-ज्वार, कपास-मूंगफली, धान-कपास और कपास-धान फसल चक्र मुख्य हैं। उत्तरी भारत में कपास के बाद गेहूं की फसल लेने के लिए कपास की जल्दी पकने वाली प्रजाति और गेहूं की देर से बोने वाली प्रजाति बोनी चाहिए।
- विभिन्न क्षेत्रों के लिए अमेरिकन कपास (गोसीपियम हिर्सुटम) की उन्नतशील किस्में जैसे-एफ. 286, एल.एस. 886, एफ. 414, एफ. 846, एफ. 1861, एल.एच. 1556, पूसा 8-6, एफ. 1378,एच. 1117, एच.एस. 45, एच.एस. 6, एच. 1098, गंगानगर

कपास

कपास

अगेती, बीकानेरी नरमा। **देसी कपास** (गोसीपियम आर्बोरिम) की उन्नत किस्में जैसे-एच. 777, एच.डी. 1, एच. 974, एच.डी. 107, डी.एस. 5, एल.डी. 694, एल.डी. 327, एल.डी. 230, एवं **संकर कपास** की उन्नत किस्में जैसे-फतेह, एल.डी.एच. 11, एल.एच. 144, धनलक्ष्मी, एच.एच. एच. 223, सी.एस.ए.ए. 2,उमा शंकर, राज.एच.एच. 116, जे.के.एच.वाई. 1, जे.के. एच.वाई. 2 (जीरोटिलेज), एन.एच.एच. 44, एच एच वी 12, एच. 8 आदि भारत के सभी क्षेत्रों में उगाई जाती हैं।

- उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाना चाहिए। कपास की देसी किस्मों के लिए 50-70 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20-30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, अमेरिकन एवं देसी किस्मों के लिए 60-80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 20-30 कि.ग्रा. पोटाश और संकर किस्मों के लिए 150-60-60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर का प्रयोग लाभदायक पाया गया है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं बाकी उर्वरकों की पूरी मात्रा बुआई के समय डालनी चाहिए। नाइट्रोजन की बाकी मात्रा फूल आने के समय सिंचाई के बाद देनी चाहिए।
- जहां सिंचाई की सुविधा हो, कपास की बुआई 15-25 मई के बीच कर दें। इससे सही समय पर फसल तैयार हो जायेगी। बारानी क्षेत्र में मानसून के साथ ही बुआई करना उचित होगा। कपास में 3-4 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। मृदा की नमी के अनुसार सिंचाई करें एवं अंतिम सिंचाई एक तिहाई टिंडे खुलने पर करें।
- कपास की अच्छी उपज लेने हेतु पूरी तरह खरपतवार नियंत्रण होना अति आवश्यक है। इसके लिए तीन-चार बार फसल बढ़वार के समय गुड़ाई बैलचालित त्रिफाली कल्टीवेटर या ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर द्वारा करनी चाहिए। पहली गुड़ाई सूखी हो, जिसे पहली सिंचाई के पूर्व (बुआई के 30-35 दिनों पहले) ही कर लेना चाहिए। फूल व गूलर बनने पर कल्टीवेटर का प्रयोग न किया जाए। इन अवस्थाओं में खुर्पी द्वारा खरपतवार निकाल देना चाहिए। 3.3 कि.ग्रा. पेंडीमेथलीन प्रति हैक्टर जमाव से पूर्व या बुआई के 2-3 दिनों के अंदर प्रयोग करें।

चारे की फसलों में देखभाल

- सिंचाई के इंतजाम वाले खेतों में चारे के लिहाज से बाजरा, ज्वार व मक्के की बुआई करें। इसकी बुआई मार्च के अंत या अप्रैल तक कर दी जाती है सिंचाई का विशेष ध्यान रखें। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करें। नाइट्रोजन की मात्रा को भी ठीक प्रकार से प्रयोग करें। मई में सिंचित हालत में चारे के लिए मक्की (किस्में-जे 1006, प्रभात, प्रताप, केसरी व मेघा) ज्वार (किस्में-जे एम 20, एचसी 136, 171, 260, 308, एसएल 44 व पंजाब सूडेक्स चरी-1) बाजरा (पीसीबी 141) मकचरी (टीएल-1), नेपियर-बाजरा हाइब्रिड (पीवीएन-233 व 83, संकर-21), गिनी घास (पी. जी.जी. 518 व 101), ग्वार (एफ. एस. 277 व ग्वार-80), लोबिया (लोबिया-88 व 90)। यह सिफारिश की जाती है कि चारे की फसलें मिलाकर बोने में चारा पौष्टिक बनता है, पैदावार भी अधिक तथा ज्यादा कटाई

ज्वार पूसा चरी संकर-109

बाजरा-चरी की खेती

मिलती हैं। मिश्रित चारे में सही मात्रा में बीज लेकर रोगों के लिए उपचारित कर लें। फिर खेत में 2-3 बार जुताई करके 10 टन देसी खाद तथा 1 बोरा यूरिया डालकर बीज छिड़कर बुआई करें। काफी बढ़वार होने पर जरूरत के अनुसार चारे की कटाई लेते रहें तथा कटाई के बाद आधा बोरा यूरिया छिड़क दें।
- एक कटाई वाली ज्वार की किस्मों में नाइट्रोजन की आधी मात्रा को पहली सिंचाई के बाद खेत में प्रयोग करते हैं। बहुकटाई वाली चरी में 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन या 65 कि.ग्रा. यूरिया तथा मक्के में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन या 87 कि.ग्रा. यूरिया बुआई के 30 दिनों बाद टॉप ड्रेसिंग करें। हर कटाई के बाद शेष नाइट्रोजन को बराबर मात्रा में उपयोग करने पर हरे चारे की अच्छी बढ़वार होती है। बरसीम, जई व लोबिया की

बीज वाली फसल की कटाई कम करें एवं 10-12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहें।

गर्मी की जुताई, मृदा परीक्षण एवं भूमि का समतलीकरण

- मिट्टी की जांच करवाने का यह उपयुक्त समय होता है। मृदा में पोषक तत्वों की कमी जानने के लिए मृदा परीक्षण कराने के साथ-साथ उसका पी-एच मान भी पता करना चाहिए। यदि पी-एच मान 6.5-7.5 तक हो तो फसलों के लिए उत्तम है, परंतु बहुत अधिक या कम होने पर मृदा का उपचार आवश्यक है।

गर्मी की जुताई

- अपने हर खेत से लगभग 15 स्थानों से 15 सें.मी. गहराई तक खुरपी की सहायता से मृदा नमूने इकट्ठे करें। मृदा के नमूना खेत के किनारे किसी खाद वाले स्थान, छायादार स्थान व सिंचाई की नाली के पास से न लें। एक खेत से इकट्ठे किए गए नमूने की मिट्टी आपस में अच्छी तरह मिलाकर अंत में उसमें से 500 ग्राम मिट्टी एक कपड़े की थैली में भरकर पूरे विवरण के साथ मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में भेजें। नमूनों की जांच के उपरांत मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य प्राप्त करें ताकि अगली खरीफ की फसल में मृदा स्वास्थ्य के आधार पर संस्तुत खाद व उर्वरकों का प्रयोग किया जा सके।
- मिट्टी पलटने वाले हल से इस माह खेतों की जुताई करना लाभदायक है। जुताई के लिए मिट्टी पलटने वाला हल या ट्रैक्टरचालित यंत्र भी उपयोग में ले सकते हैं। इससे निचली परत की मिट्टी के साथ रोगों के कीटाणु, अंडे, खरपतवार के बीज आदि ऊपर आ जाते है, जो सूरज की गर्मी से मर जाते हैं। इस प्रकार कीटे-मकोड़े और खरपतवारों की संख्या कम हो जाती है।

हरी खाद वाली फसलों में देखभाल

- दलहनी एवं गैर दलहनी फसलों को उनकी वानस्पतिक वृद्धिकाल में उपयुक्त समय पर मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए जुताई करके मिट्टी में अपघटन के लिए दबाना ही हरी खाद देना कहलाता है। भारतीय कृषि में दलहनी फसलों का महत्व सदैव रहा है। ये फसलें अपनी जड़ ग्रंथियों में उपस्थित सहजीवी जीवाणु द्वारा वातावरण में नाइट्रोजन का दोहन कर मिट्टी में स्थिर करती हैं। आश्रित पौधे के उपयोग के बाद जो नाइट्रोजन मिट्टी में शेष रह जाती है, वह आगामी फसल द्वारा उपयोग में लायी जाती है। दलहनी फसलें अपने विशेष गुणों जैसे भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने, प्रोटीन की प्रचुर मात्रा के कारण पोषकीय चारा उपलब्ध कराने तथा मृदा क्षरण के अवरोधक के रूप में विशेष स्थान रखती हैं।
- हरी खाद के लिए दलहनी फसलों में सनई, ढैंचा, उड़द, मूंग, अरहर, चना, मसूर, मटर, लोबिया, मोठ, खेसारी तथा कुल्थी मुख्य है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में जायद में हरी खाद के रूप में अधिकतर सनई, ढैंचा, उड़द एवं मूंग का प्रयोग ही प्रायः प्रचलित है। हरी खाद के लिए उगाई जाने वाली फसल का चुनाव भूमि जलवायु तथा उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए। हरी खाद के लिए फसलों में निम्न गुणों का होना आवश्यक है:
  - हरी खाद के लिए ऐसी फसल होनी चाहिए जिसमें तना, शाखाएं और पत्तियां कोमल एवं अधिक हों ताकि मिट्टी में शीघ्र अपघटन होकर अधिक से अधिक जीवांश तथा नाइट्रोजन मिल सके और फसल शीघ्र वृद्धि करने वाली हो।

फसल, सूखा अवरोधी होने के साथ जल मग्नता को भी सहन करती हों।
  - दलहनी फसलों की जड़ों में उपस्थित सहजीवी जीवाणु ग्रंथियां वातावरण में मुक्त नाइट्रोजन को यौगिकीकरण द्वारा पौधों को उपलब्ध कराती हैं।
  - हरी खाद के साथ-साथ फसलों को अन्य उपयोग में भी लाया जा सकता है। हरी खाद के लिए सनई या ढैंचा की बुआई भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ाने के लिए बहुत ही आवश्यक है। इन फसलों से 50-60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्राप्त होती है। ढैंचा या सनई की बुआई करने के लिए 60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बीज की आवश्यकता है।
  - फसलें मूसला जड़ों वाली हों ताकि गहराई से पोषक तत्वों का अवशोषण हो सके। क्षारीय एवं लवणीय मृदाओं में गहरी जड़ वाली फसल अंतःजल निकास बढ़ाने में आवश्यक होती है। इनमें रोग एवं कीट कम लगते हों तथा बीज उत्पादन को क्षमता अधिक हो।
- बुआई से पूर्व बीज को 12 घंटे पानी में भिगोने के बाद अंकुरण जल्दी होता है। हरी खाद की फसलें बुआई के 35-40 दिनों में पलटने योग्य हो जाती हैं। अतः खरीफ में धान की रोपाई के समय को ध्यान में रखते हुए ढैंचा, सनई और लोबिया की बुआई करें।

करेला

इसके साथ ही भूमि में वर्षा-जल का अवशोषण बढ़ जाता है तथा भूमि की उर्वरा शक्ति में भी सुधार होता है।

सब्जी वाली फसलों का उत्पादन एवं प्रबंधन

- कद्दूवर्गीय फसलें जैसे कददू, तोरई, काशीफल, लौकी, ककड़ी, तरबूज व खरबूजा इत्यादि की बुआई मार्च व अप्रैल में हो चुकी है। इस समय हरी फसल कम होती है। कीट-मकोड़ों के लिए मेजबान पौधे कम होते हैं, इस कारण से कीट-मकोड़ों का प्रकोप बढ़ जाता है। अत: इनके नियंत्रण का विशेष ध्यान रखना चाहिए। एक बार पौध अवस्था पर फसल स्वस्थ रहती है तो आगे भी अच्छी उपज मिलने की पूरी संभावना रहती है। सिंचाई सामान्यतया गर्मियों में खासकर मई में 5-8 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए।
- फल मक्खी और लाल कद्दू कीट के नियंत्रण के लिए कार्बोरिल 50 डब्ल्यू पी 2 ग्राम/लीटर में मिलकर छिड़काव करें। फल मक्खी के नियंत्रण के लिए कार्बोरिल 2 ग्राम/लीटर की दर से छिड़काव करना चाहिए। ध्यान रखें कि कीटनाशी का छिड़काव फलों के टूटने के बाद ही करें।
- कुछ रोग जैसे मृदु रोमिल आसिता, चूर्णिल आसिता और जड़ विगलन रोग मूलत: फफूंदी से फैलने वाले रोग हैं। इनकी रोकथाम के लिए रोगग्रस्त फसल अवशेषों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। मृदु रोमिल आसिता के लिए मैन्कोजेब 2.5 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। कद्दूवर्गीय फसलों में बुकनी रोग के नियंत्रण के लिए कैराथैन 1 लीटर या 3 कि.ग्रा. घुलनशील गंधक/हैक्टर की दर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

बैंगन

- बैंगन में तना और फलभेदक एक गंभीर कीट हैं। इनके नियंत्रण के लिए 10 मीटर के अंतराल पर 100 फेरोमोन ट्रेप प्रति हैक्टर लगाकर वयस्क नर को पकड़कर नष्ट कर देना चाहिए। रैटून फसल न लें, क्योंकि इसमें फलछेदक का प्रकोप अधिक होता है। ग्रसित प्ररोहों व फलों को निकाल कर भूमि में दबा दें।, नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या बी.टी. 1 ग्राम/लीटर या स्पिनोसेड 45 एस.सी. 1 मि.ली./4 लीटर या कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम/लीटर या डेल्टामेथ्रिन 1 मि.ली./लीटर का फूल आने से पहले इस्तेमाल करें।
- मार्च में रोपे गए टमाटर, मिर्च व बैंगन में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। टमाटर और बैंगन में 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व मिर्च में 35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से रोपाई

टमाटर

टमाटर के फलों को सफेद होने से बचाने के लिए सिंचाई का ठीक प्रबंध के साथ-साथ, 3-4 पंक्तियों के बीच में सनई या ढैंचा लगाएं। ऐसी किस्मों का चयन करें, जिनमें अधिक पत्तियां होती है। अगर खेत में तम्बाकू की सूंडी का प्रकोप हो तो फेरोमोन ट्रेप लगाकर इकट्ठा कर, नष्ट

कर देना चाहिए। सफेद मक्खी रस चूसक, वाइरस को फैलाती है। इसके नियंत्रण के लिए कनफिडोर 0.3 मि.ली./ लीटर पानी में घोलकर 30 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। टमाटर, बैंगन व भिन्डी में फलछेदक सूंडी से बचाव हेतु फलों की तुड़ाई के बाद डेल्टामेथ्रिन 2.8 ईसी 1.0 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अच्छी पैदावार के लिए टमाटर में निराई-गुड़ाई करते रहें और पौधे के पास मिट्टी चढ़ाएं। अधिक बढ़ने वाली किस्मों को उपयुक्त सहारा देने के लिए स्टैकिंग करें। टमाटर के फलों को फटने से बचाने के लिए सिंचाई का उपयुक्त प्रबंध और 0.3-0.4 प्रतिशत बोरॉन का छिड़काव करना चाहिए।

फूलगोभी

फूलगोभी की अगेती उन्नतशील प्रजातियां जैसे-पूसा कार्तिक संकर, पूसा दीपाली, पूसा कार्तिकी, पूसा अश्वनी, पूसा मेघना आदि प्रमुख हैं। अच्छी जमाव क्षमता वाला 500-600 ग्राम तथा संकर किस्मों के लिए 350-400 ग्राम बीज/हैक्टर की दर से पर्याप्त होता है। फूलगोभी की अगेती बुआई का समय मध्य मई से जून माह है। इस समय बीज बुआई तथा 5-6 सप्ताह वाली पौध की रोपाई की जाती है। बीज उपचार के लिए बाविस्टीन या कैप्टॉन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से या ट्राईकोडर्मा 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से करें। नर्सरी बेड छायादार एवं पर्याप्त नमी वाले स्थान पर बनाने चाहिए। 20 नर्सरी बेड प्रति हैक्टर क्षेत्र के लिए पर्याप्त होता है।

खेत की तैयारी के समय 25-30 टन/हैक्टर की दर से अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद मिट्टी में मिला दें। रोपाई से पहले 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 100 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश/हैक्टर तथा खेत की अंतिम तैयारी के समय आधी मात्रा में नाइट्रोजन तथा सम्पूर्ण मात्रा में फॉस्फोरस व पोटाश भूमि में मिला दें। शेष नाइट्रोजन को बराबर दो हिस्सों में बांटकर एक हिस्सा रोपाई के एक महीने बाद निराई-गुड़ाई के साथ डालें तथा दूसरा हिस्सा फूल बनने की स्थिति में पौधों को मिट्टी चढ़ाते समय मिलाएं। खरपतवार नियंत्रण के लिए रोपाई से पहले बेसालीन 2.5 लीटर या स्टॉम्प 3.3 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव कर हल्की सिंचाई करें। अगेती फसल में रोपाई के तुरन्त बाद तथा उसके पश्चात साप्ताहिक अंतराल पर व मध्यम व पछेती फसल में 10-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें।

भिंडी

- भिन्डी की बुआई फरवरी व मार्च में हो जाती है। इस समय इस फसल में पुष्पन और फली विकास अवस्था में होती है। सिंचाई 10-12 दिनों के अंतराल पर की जाती है।
- **फली तथा तना छेदक कीट:** ये फलियों में छेद कर अंदर बीज को हानि पहुंचाते हैं तथा फली खाने योग्य नहीं रह जाती है। पौधे की अंतिम कोमल शाखाओं में छेदकर देते हैं, जिससे पौधे का ऊपरी हिस्सा मुरझा जाता है। इस कीट को नियंत्रण करने के लिए एमामेक्टिन बेन्जोएट (2 ग्राम/10 लीटर) या स्पिनोसैड 1 मि.ली./3 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें और अंडा परजीवी ट्राईकोग्रामा की 50,000 कार्ड की मदद से खेत में छोड़ने से इस कीट का प्रकोप काफी कम हो जाता है। भिन्डी की पत्ती को काटने वाले कीट

के लगभग 45-50 दिनों बाद दूसरी टॉप ड्रेसिंग करें।

- यदि प्याज व लहसुन की खुदाई न हुई हो तो फसल में सिंचाई बंद कर दें और प्याज के सूखने पर बल्बों की खुदाई अवश्य करें।
- फूलगोभी की नर्सरी अवस्था में आर्द्रगलन फफूंद नामक रोग से पौधों का तना सतह के पास से गलने लगता है और पौधे मर जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम/मि.ली. में मिलाकर बीज को उपचारित करें या ट्राइकोडर्मा 25 ग्राम/10 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद को नर्सरी (100 वर्गमीटर) में अच्छी प्रकार मिलायें या बाविस्टीन या कैप्टॉन 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचार करें या बाविस्टन या कैप्टॉन 2 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
- फूलगोभी, गांठगोभी, पत्तागोभी, गाजर, मूली, पालक, मेथी एवं शलजम की बीज वाली फसलों की कटाई करें और बीजों को इतना सुखाएं कि उनमें 8 फीसदी ही नमी रहे।

अदरक

हल्दी

को मारने के लिए साइपलेरमेथ्रिन 0.5 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर 15 दिनों के अंतराल पर छिड़कना चाहिए।

- हल्दी के लिए 15-20 क्विंटल प्रकंदों की प्रति हैक्टर बुआई के लिए आवश्यकता होती है। हल्दी की बुआई 40×20 सें.मी. की दूरी पर व 4 सें.मी. की गहराई पर करें और बुआई से पहले हल्दी के 20-25 ग्राम के टुकड़ों को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के 0.3 प्रतिशत के घोल में 10 प्रतिशत तक उपचारित करने के बाद बुआई करनी चाहिए।
- अदरक के लिए 16-18 क्विंटल प्रकंदों की प्रति हैक्टर बुआई के लिए आवश्यकता होती है। अदरक की बुआई 30×20 सें.मी. की दूरी पर व 4 सें.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। बुआई से पहले अदरक के 20-25 ग्राम टुकड़ों को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के 0.3 प्रतिशत के घोल में 10 प्रतिशत तक उपचारित करने के बाद बुआई करनी चाहिए।
- अदरक, हल्दी व सूरन की बुआई करने के बाद खेत को सूखी पुआल या घास-फूस या सूखी पत्तियों से ढक दें, जिससे खेत में नमी बनी रहे और अंकुरण अच्छा हो सके। इस माह सूरन की बुआई का कार्य पूरा कर लें
- मूली की किस्म पूसा चेतकी गर्मी मौसम के लिए उपयुक्त है और 45-50 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी बुआई अप्रैल से अगस्त तक की जाती है।

नीबू

पुष्प व सुगंध वाले पौधों का प्रबंधन

- रजनीगंधा में एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई व दो सप्ताह के अंतराल पर निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए। इससे खेत में खरपतवार को बढ़ने से रोका जा सकता है। यह फसल के लिए हानिकारक होता है। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में कंद लगाने का उचित समय फरवरी के अंतिम सप्ताह से लेकर जुलाई तक है। देर से लगाने पर व्यवसाय के योग्य पुष्प डंडियां तो मिल जाती हैं परंतु नवजात कंद कम बनते हैं। पहाड़ी इलाकों में कंद रोपण का उचित समय मई से जून तक रहता है। कंद को पंक्तियों में लगाना ठीक रहता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30-40 सें.मी. एवं पंक्तियों में कंद से कंद की दूरी 15-20 सें.मी. रखनी चाहिए। एक एकड़ रजनीगंधा लगाने हेतु लगभग 50-60 हजार कंद की आवश्यकता होती है। अच्छी पुष्प डंडियां प्राप्त करने के लिए 3 से 5 सें.मी. व्यास वाले कंद लगाने चाहिए। कंद लगाते समय खेत में नमी का रहना आवश्यक है।

- गुलाब की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई व निराई-गुड़ाई करते रहें।
- कंद से कल्ले अंकुरित होकर दिखाई देने लगें, तब सिंचाई कर देनी चाहिए। समय-समय पर वातावरण के अनुसार सिंचाई करते रहें। अच्छी पैदावार के लिए खेत में नमी बनी रहनी चाहिए।
- कीट या बीमारी का प्रकोप हो तो 0.2 प्रतिशत फफूंदीनाशक कैप्टॉन या बाविस्टिन और 0.2 प्रतिशत कीटनाशक दवा-रोगोर, मेटासिस्टाक्स आदि का घोल बनाकर 20-25 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करते रहें।

बागवानी फसलों का उत्पादन एवं प्रबंधन

- अमरूद की नई बढ़वार, जिस पर फूल लग रहे हों, की शाखा का 3/4 भाग काटकर निकाल दें। इससे बरसात की फसल तो कम हो जायेगी परंतु रबी की फसल में वृद्धि हो जायेगी। अमरूद में 10-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पुष्पन अवस्था पर 10 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव 10-15 दिनों के अंतर पर करने से जायद के मौसम में 3-8 गुना अधिक फसल प्राप्त होती है।अमरूद की फसल में मार्च से मई में फूल आते हैं। इसकी फसल अगस्त से लेकर मध्य अक्टूबर तक मिलती रहती है। अमरूद में बहार नियंत्रण के लिए 10 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव अप्रैल व मई में फूलों पर करें।
- मई की छंटाई के बाद उभरने वाली नई शाखाओं में सर्दियों की फसल के लिए अधिक फल देने की क्षमता होती है। तेज धूप से झुलसन को रोकने के लिए पेड़ों के बड़े अंगों और तनों पर कॉपर तथा चूने का लेप लगाएं।
- आम के फलों का ऊतकक्षय रोग से बचाव के लिए 8 ग्राम बोरेक्स का 1 लीटर पानी में घोलकर इसका छिड़काव करें। आम में फुदका कीट नियंत्रण के लिए फलों के मटर के आकार की अवस्था पर मोनोक्रोटोफॉस 1.25 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर करना चाहिए। दासी मक्खी के नियंत्रण के लिए कार्बोरिल 0.2 प्रतिशत के साथ 0.1 शर्करा और 0.1 प्रतिशत मैलाथियान मिलाकर ट्रैप बनाकर लटकाएं। खर्रा या पाउडरी रोग के लिए 0.2 प्रतिशत घुलनशील गंधक का प्रयोग करें। कोइलिया फल विकार के लिए बोरेक्स 1 प्रतिशत का छिड़काव फल लगने पर सिंचाई के साथ करें। फलों को टपकने से रोकने के लिए वृद्धि हार्मोन एनएए 20 पीपीएम का छिड़काव करें।
- लीची के पौधों में फल मई-जून में पक कर तैयार हो जाते हैं। फल, पकने के बाद गहरे गुलाबी या लाल रंग के हो जाते हैं। इनकी तुड़ाई मई से जुलाई तक होती है। लीची को फटने से बचाने हेतु बागों में सिंचाई का उपयुक्त प्रबंधन होना आवश्यक है। साथ ही फल विगलन रोग से बचाव हेतु फलों को पकने से 20-25 दिनों पूर्व बाविस्टीन की 10 ग्राम मात्रा को 10 लीटर पानी में घोलकर फलों पर छिड़काव करें।
- केला रोपण हेतु 1.5 मीटर की दूरी पर 50×50 सें.मी. के गड्ढे बना लें। प्रत्येक गड्ढे को 10 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट की खाद, 10 ग्राम कार्बोफ्यूरॉन, 50 ग्राम फॉस्फोरस तथा खेत के ऊपर की मिट्टी मिलाकर गड्ढों को भरें। रोपित केले में 25 ग्राम नाइट्रोजन पौधे से 50 सें.मी. दूर गोलाई में डालकर मिट्टी में मिलाकर सिंचाई करें।
- अंगूर के बाग में गर्मी के मौसम में लगातार एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई करें। एंथ्रेक्नोज एवं सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा की रोगों की रोकथाम के लिए फाइटोलोन या ब्लाईटाक्स का 0.3 प्रतिशत का छिड़काव अर्थात 750 ग्राम 250 लीटर पानी में प्रति एकड़ की मात्रा से एक बार मई के प्रथम सप्ताह में करें और 15 दिनों के अंतराल पर सितम्बर तक करते रहें।
- आम, अमरूद, पपीता, लीची, अंगूर, आंवला,बेर, नाशपाती, आलूबुखारा एवं नीबू में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- गर्मी के कारण उचित जल प्रबंधन आवश्यक होता है। अत: बागवानी फसलों में 10-12 दिनों के अंतराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। जरूरत के हिसाब से कटाई-छंटाई करते रहना चाहिए।
- कागजी नीबू में फल फटने की समस्या के निराकरण हेतु पोटेशियम सल्फेट के 4 प्रतिशत का घोल पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

अमरूद

आम

(आवरण पृष्ठ II का शेष...)

चीला

छत्तीसगढ़ सांस्कृतिक विविधता से परिपूर्ण राज्य है। यही विशेषता इसे पहचान दिलाती है। इस राज्य में त्यौहारों की भी विविधता है, जिसमें विभिन्न व्यंजनों का महत्वपूर्ण स्थान है। सावन अमावस्या में मनाये जाने वाले हरेली पर्व में चीले का विशेष महत्व होता है। चीला दो प्रकार से बनता है, एक मीठा व दूसरा नमकीन। नमकीन चीला बनाने के लिए चावल के आटे में स्वाद के अनुसार नमक, और तेल मिलाया जाता है। अधिक स्वाद बढ़ाने के लिए धनिया व मिर्च भी मिला सकते हैं। इसे बनाने की पारंपरिक विधि इस प्रकार है-सर्वप्रथम चावल के आटे का घोल बनाते हैं, फिर उसमें नमक, मिर्च व धनिया मिला लेते हैं। मिश्रण तैयार होने के बाद तवा गर्म करके उसमें थोड़ा सा तेल डालकर मिश्रण को तवे पर फैला दिया जाता है। कुछ देर बाद इसे पलटा जाता है और कुछ देर सेंका जाता है।

चीला का मिश्रण तवे पर

चीला, टमाटर की चटनी के साथ

इसे टमाटर की चटनी के साथ परोसते हैं, जिससे इसे खाने में एक अलग स्वाद की अनुभूति होती है। यह कम लागत में व कम समय में बनने वाला एक लाजवाब व्यंजन है। स्वाद में मीठा बनाने के लिए गेहूं के आटे में गुड़ मिलाते हैं। इस घोल को गर्म तवे पर तेल डालकर सेंका जाता है। इसे छत्तीसगढ़ में गुड़ हाचीला कहते हैं।

के पत्तों से ढककर आग के अंगार पर सेंककर बनाया जाता है। यह आकार में बड़ी व मोटी रोटी होती है। इसे टमाटर की चटनी के साथ खाने में बड़ा आनंद आता है।

करी-कढ़ी

बेसन से निर्मित करी-कढ़ी लोकप्रिय एवं स्वादिष्ट व्यंजन है। नमक डालकर नमकीन करी बनाई जाती है तथा इसमें दही का भी उपयोग करते हैं। तड़के के रूप में इसमें मीठे नीम की पत्ती, सरसों, जीरा एवं प्याज डालते हैं, जिससे करी-कढ़ी का स्वाद दोगुना हो जाता है।

लाटा

यह छत्तीसगढ़ लालीपन के नाम से प्रसिद्ध लोकप्रिय व्यंजन है। इसे इमली को कूटकर, नमक, मिर्च और धनिया डालकर बनाया जाता है। ग्रीष्मकालीन ऋतु में अधिकतर इसे खाया जाता है।

भजिया

छत्तीसगढ़ की संस्कृति व परंपरा में अतिथि का विशेष महत्व है, जिसमें व्यंजन की प्रमुख भूमिका होती है। अतिथि सत्कार में भजिया व्यंजन बनाया जाता है।

भजिया के लिए बेसन, नमक, मिर्च, धनिया, प्याज और सोडा का प्रयोग किया जाता है। बेसन में नमक व पानी डालकर घोल तैयार किया जाता है। उसमें हरी मिर्च, प्याज व धनिया मिलाया जाता है। कढ़ाही में तेल गर्म करके उसमें घोल को हाथों के सहारे गोलनुमा छोटा-छोटा डाला जाता है। इसे थोड़ा पकने तक तला जाता है। इसे टमाटर की चटनी या अचार के साथ गरम-गरम परोसा जाता है। यह जल्दी बनने वाला व्यंजन है। यह त्यौहार में भी बनाया जाता है। ■

'फार्म शॉपी' का शुभारंभ

भाकृअनुप-केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोच्चि का कृषि विज्ञान केंद्र (एर्नाकुलम) और कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र-(एटीआईसी) द्वारा संयुक्त रूप से भाकृअनुप-केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोच्चि मुख्यालय में 'फार्म शॉपी-दी सेफ फूड स्टोर' का शुभारंभ किया गया। किसानों, किसानों के सामूहिक और स्व-सहायता समूहों से सीधे ताजा, स्वच्छ और शुद्ध खाद्य सामग्री प्राप्त कर केंद्र पर उपलब्ध करवाया जाता है।

भारत सरकार के वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दोगुना करने के लक्ष्य के अनुरूप किसानों के लिए बाजार में आय प्रदान करने की एक पहल के तहत फार्म शॉपी का उद्देश्य एक ऐसे मॉडल का प्रदर्शन करना है, जो बिचौलियों से बचाते हुए किसानों के लिए उचित मूल्य सुनिश्चित करता है। दैनिक जीवन में घर पर उपयोग किए जाने वाले खाद्य और स्वास्थ्य उत्पाद जैसे मछली, चावल, अंडा, दूध, खाना पकाने का तेल, दालें, मसाले आदि केंद्र पर बिक्री के लिए उपलब्ध हैं।

यह केंद्र जैविक कृषि गतिविधियों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। क्षेत्र के जैविक किसान, फार्म शॉपी के माध्यम से अपनी उपज के लिए बाजार खोजने में सक्षम होंगे।

डा. ए. गोपालकृष्णन, निदेशक भाकृअनुप-केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोच्चि ने शॉपी का उद्घाटन किया। ■

स्रोतः भाकृअनुप-केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोच्चि)

पंजीकरण संख्या 14252/57 पंजीयक, समाचार पत्र, भारत सरकार
दिल्ली पोस्टल पंजीकृत संख्या DL(C)-12/1145/10-12
ISSN 0023-1088
मूल्य: ₹30

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रकाशन

भाकृअनुप
ICAR

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें:
व्यवसाय प्रबंधक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012
टेलिफैक्स: 91-11-25843657; ई-मेल: bmicar@icar.org.in
वेबसाइट: www.icar.org.in

डा. सतेन्द्र कुमार सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह